विषय-सूची

भूमिका

हिन्दी-गद्य-साहित्य का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है। कहा जाता कि १४वीं शताब्दी में गोरखपंथी साधुओं ने ब्रजभाषा में कुछ गद्य-रचना थी, किन्तु यह रचना प्रामाणिक नहीं है। १६वीं शताब्दी में वल्लभ-प्रदाय के अन्तर्गत ब्रजभाषा गद्य में अनेक ग्रन्थ लिखे गये। ये ग्रन्थ सम्प्रदाय सम्बन्धित कवि-महात्माओं के जीवन का वर्णन करते हैं। १७-१८वीं शताब्दी में ब्रजभाषा-गद्य में बहुत से टीका-ग्रन्थ लिखे गये तथा संस्कृत के मिक ग्रन्थों के अनुवाद भी हुए। इस प्रकार ब्रजभाषा में गद्य-रचना की परम्परा कई सौ वर्षों तक चलती रही, किन्तु, फिर भी ब्रजभाषा गद्य अभि-व्यक्ति का सशक्त माध्यम बनने में असमर्थ रहा।

हिन्दी में खड़ी बोली गद्य का विकास १६वीं शताब्दी के साथ प्रारम्भ आ, यद्यपि इससे पहले के भी कुछ थोड़े से उदाहरण उपलब्ध हैं। १६वीं शताब्दी के शुरू की परिस्थितियाँ खड़ी बोली गद्य के विकास के लिए बहुत अनुकूल थी। ईस्ट-इण्डिया-कम्पनी के अधिकारियों ने लगभग इसी समय अपने विदेशी-कर्मचारियों को हिन्दी-शिक्षा देनी शुरू की और इसके लिए कलकत्ते में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की। ईसाई पादरियों ने भी अपने धर्म प्रचार के लिए हिन्दी-गद्य का व्यापक प्रयोग किया। उन्होंने धार्मिक ग्रन्थों के साथ-साथ, चर्च-मिशनों द्वारा स्थापित स्कूलों के लिए हिन्दी में पाठ्य-पुस्तकें भी तैयार करायीं। ईसाई धर्म-प्रचार आन्दोलन की प्रतिक्रिया में जो हिन्दू धर्म-सुधार आन्दोलन विकसित हुए (जैसे आर्य-समाज) उन्होंने भी हिन्दी गद्य के विकास में हाथ बटाया। आर्य-समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती हिन्दी के बड़े समर्थक थे। इसके अतिरिक्त मुन्शी सदासुख लाल और इंशाअल्ला खाँ जैसे हिन्दू और मुसलमान लेखकों ने स्वतन्त्र भाव से भी

करती है। निराला के संस्मरण, प्रेमचंद के पत्र और सुभद्राकुमारी चौहान का महादेवी वर्मा द्वारा लिखित रेखाचित्र हिन्दी-साहित्य के तीन महत्वपूर्ण व्यक्तित्वों का परिचय कराते हैं तो लियोनार्दो दा विंची की जीवनी आधुनिक युग के प्रथम विज्ञान-पुरुष की साधना को प्रस्तुत करती है। वाणिज्य-संकाय के छात्र आधुनिक भारत के महत्वपूर्ण कारखाने, रांची के भारी उद्योग कारखाने का परिचय निःसंदेह रोचक पायेंगे। यशपाल और गंगाप्रसाद पाण्डेय की कहानियाँ जहाँ व्यंग्य और व्यंजना की दृष्टि से उत्तम हैं, वहाँ रेणु की कहानी ग्राम्य-मन के चित्रण में मार्मिक बन गई है।

संक्षेप में, प्रस्तुत संकलन केवल गद्य-विधाओं के वैविध्य को ही प्रस्तुत नहीं करता है, विचार-वैविध्य को भी प्रस्तुत करता है। इन रचनाओं का सम्पादन करते समय मेरे सामने जहाँ विविध गद्य-विधाओं के संकलन का उद्देश्य रहा है, वहाँ रचनाओं द्वारा नवीन प्रगतिशील विचारधारा के प्रतिपादन का उद्देश्य भी रहा है। मैं विश्वास करता हूँ छात्र दोनों ही दृष्टियों से इस संकलन को पसन्द करेंगे।

अगस्त, १९७० ई.

जुगमन्दिर तायल

भूमिका

हिन्दी-गद्य-साहित्य का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है। कहा जाता है कि १४वीं शताब्दी में गोरखपंथी साधुओं ने ब्रजभाषा में कुछ गद्य-रचना की थी, किन्तु यह रचना प्रामाणिक नहीं है। १६वीं शताब्दी में वल्लभ-सम्प्रदाय के अन्तर्गत ब्रजभाषा गद्य में अनेक ग्रन्थ लिखे गये। ये ग्रन्थ सम्प्रदाय से सम्बन्धित कवि-महात्माओं के जीवन का वर्णन करते हैं। १७–१८वीं शताब्दी में ब्रजभाषा-गद्य में बहुत से टीका-ग्रन्थ लिखे गये तथा संस्कृत के धार्मिक ग्रन्थों के अनुवाद भी हुए। इस प्रकार ब्रजभाषा में गद्य-रचना की परम्परा कई सौ वर्षों तक चलती रही, किन्तु, फिर भी ब्रजभाषा गद्य अभि-व्यक्ति का सशक्त माध्यम बनने में असमर्थ रहा।

हिन्दी में खड़ी बोली गद्य का विकास १९वीं शताब्दी के साथ आरम्भ हुआ, यद्यपि इससे पहले के भी कुछ थोड़े से उदाहरण उपलब्ध हैं। १९वीं शताब्दी के शुरू की परिस्थितियाँ खड़ी बोली गद्य के विकास के लिए बहुत अनुकूल थीं। ईस्ट-इण्डिया-कम्पनी के अधिकारियों ने लगभग इसी समय अपने विदेशी-कर्मचारियों को हिन्दी-शिक्षा देनी शुरू की और इसके लिए कलकत्ते में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की। ईसाई पादरियों ने भी अपने धर्म प्रचार के लिए हिन्दी-गद्य का व्यापक प्रयोग किया। उन्होंने धार्मिक ग्रन्थों के साथ-साथ, चर्च-मिशनों द्वारा स्थापित स्कूलों के लिए हिन्दी में पाठ्य-पुस्तकें भी तैयार करायीं। ईसाई धर्म-प्रचार आन्दोलन की प्रतिक्रिया में जो हिन्दू धर्म-सुधार आन्दोलन विकसित हुए (जैसे आर्य-समाज) उन्होंने भी हिन्दी गद्य के विकास में हाथ बटाया। आर्य-समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती हिन्दी के बड़े समर्थक थे। इसके अतिरिक्त मुन्शी सदासुख लाल और इंशाअल्ला खाँ जैसे हिन्दू और मुसलमान लेखकों ने स्वतन्त्र भाव से भी

की।

१६वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हिन्दी गद्य का विकास और भी तीव्र गति से हुआ। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' के प्रयत्नों से उत्तर-प्रदेश के शिक्षा-विभाग में हिन्दी को स्थान मिला और हिंदी में तेजी से विभिन्न विषयों की पाठ्य पुस्तकें लिखी जाने लगी। आगरा के राजा लक्ष्मणसिंह ने कालिदास के प्रसिद्ध नाटक शकुन्तला का सुन्दर अनुवाद किया। राजा लक्ष्मणसिंह हिन्दी को विदेशी भाषाओं के प्रभाव से बिल्कुल अलग रखना चाहते थे जब कि राजा शिवप्रसाद धीरे-धीरे उर्दू और फारसी की ओर अधिक झुक रहे थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने बीच का मार्ग ग्रहण करके पहली बार हिन्दी-गद्य का स्वरूप निश्चित किया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने स्वयं हिन्दी-गद्य में अनेक प्रकार की रचनाएँ लिखी और अपने अनेक साथी-मित्रों को भी इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया।

भारतेन्दु युग का गद्य-साहित्य मुख्यत: पत्र-पत्रिकाओं का साहित्य है। इस युग के सभी प्रमुख लेखकों ने अपने-अपने पत्र निकाले और उनमें अपनी तथा अपने मित्रों की रचनाएँ प्रकाशित की। गद्य-साहित्य के अनेक रूपों में से निबन्ध और नाटक की रचना इस युग में सबसे अधिक हुई। समालोचना तथा उपन्यास की शुरुआत भी इस युग में हुई किन्तु कहानी का विकास उन्नीसवीं शताब्दी में नहीं हो सका।

बीसवीं शताब्दी की शुरुआत के साथ हिन्दी में कहानी-रचना भी आरम्भ हो गई। प्रेमचन्द ने हिन्दी कहानी को उसकी प्रारम्भिक अवस्था से विकसित करके प्रौढ़ बनाया। उपन्यास के क्षेत्र में भी प्रेमचन्द ने ऐसा ही महत्वपूर्ण कार्य किया। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दो दशकों में महावीरप्रसाद द्विवेदी और बालमुकुन्द गुप्त जैसे विद्वान् लेखकों ने हिन्दी-गद्य के परिष्कार का, उसे व्याकरण-सम्मत और शुद्ध बनाने का तथा शैली में स्थिरता लाने का महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न किया। भारतेन्दु ने हिन्दी-गद्य का सामान्य स्वरूप तो निश्चित कर दिया था किन्तु उसके परिष्कार का कार्य शेष रह गया था जो बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ के दो दशकों में उक्त विद्वानों के द्वारा पूरा हुआ। बीसवीं शताब्दी के पहले दो दशकों के बाद हिन्दी-गद्य

में विविध प्रकार की साहित्य-रचना तेजी से बढ़ी। उपन्यास-कहानी के क्षेत्र में प्रेमचन्द के कार्य का उल्लेख किया जा चुका है। जयशंकर प्रसाद ने हिन्दी नाटक को प्रेरणा प्रदान की और रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी के समालोचना साहित्य को। प्रेमचन्द के बाद हिन्दी कहानी को अनेक महत्त्वपूर्ण लेखकों ने आगे बढ़ाया किन्तु नाटक और निबन्ध के क्षेत्र में कहानी जैसी प्रगति नहीं हो सकी।

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी-गद्य में विभिन्न विधाओं का तेजी के साथ विकास हुआ है। कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में आंचलिकता की महत्वपूर्ण प्रवृत्ति आजादी के बाद ही विकसित हुई। रेडियो के प्रचार के साथ ध्वनि-नाटक और एकांकी का प्रचार बढ़ता जा रहा है। राहुल सांकृत्यायन ने अपने अनेक यात्रावृत्तों और जीवनी-ग्रंथों से हिन्दी के एक बड़े अभाव की पूर्ति की है। उनकी अपनी आत्मकथा (मेरी जीवन यात्रा) भी एक महत्वपूर्ण रचना है। बनारसी दास चतुर्वेदी ने सुन्दर रेखाचित्र और संस्मरण लिखे हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्र भी बहुत सुन्दर हैं। एकांकी के क्षेत्र में रामकुमार वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, उदयशंकर भट्ट, विष्णु प्रभाकर, लक्ष्मी-नारायण लाल, जगदीशचन्द्र माथुर आदि के नाम महत्वपूर्ण हैं। आधुनिकयुग प्रयोगशीलता का युग है। नये लेखक हिन्दी में अनेक प्रकार की नवीन प्रयोगात्मक रचनाएँ लिखकर हिंदी गद्य का वैविध्य प्रदान कर रहे हैं।

गद्य-साहित्य के विविध-रूप

सामान्य रूप से देखने पर ऐसा मालूम होता है कि काव्य की तुलना में गद्य-रचना सहज कार्य है। काव्य रचना में छन्द के अनेक नियमों का पालन करना पड़ता है जबकि गद्य-रचना में ऐसे किसी नियम की बाधा नहीं होती। फिर भी संस्कृत के एक प्राचीन साहित्यशास्त्री ने गद्य-रचना को कवियों की कसौटी कहा है। गद्य-रचना में बाहर से चाहे नियमों का अभाव दिखलाई देता है, किन्तु उत्तम और प्रभावशाली अभिव्यक्ति के लिए गद्य लेखक को अनेक अप्रत्यक्ष नियमों का पालन करना होता है। शैली पर प्रभावशाली

ढग से अधिकार पाना और इसमें भी आगे बढ़कर
विकास करना बहुत कठिन कार्य है, जिसके लिए उ
हमेशा प्रयत्नशील रहता है ।

गद्य-साहित्य के प्रथमतः दो मुख्य भेद हैं :-

१. कथात्मक गद्य—जिसमें कम या अधिक
अनिवार्य होता है ।

२. विचारात्मक गद्य—जिसमें लेखक सीधे-
करता है ।

पहले प्रकार के गद्य-साहित्य के मुख्य उदाहर
नाटक, एकांकी और जीवनी-साहित्य । दूसरे प्रकार
उदाहरण है—निबन्ध और समालोचना । यहाँ पहले
अर्थात् कथा के आश्रय को लेकर चलने वाले ग
अपेक्षित है ।

कथा को आश्रय लेकर चलने वाले गद्य-
अधिक लोकप्रिय गद्य-रूप अथवा गद्य-विधा कहानी है।
बहुत प्राचीन है । सभी प्राचीन सभ्यताओं के साहित्य
संख्या मिलती है, फिर भी आधुनिक-कहानी, उपन्यास
एक नवीन गद्य-विधा है । उपन्यास का आरम्भ १५वीं
आधुनिक कहानी का आरम्भ १६वीं शताब्दी के शुरू
हुआ । अमेरिकी लेखक एडगर ऐलन पो आधुनिक-कहा
करने वाले पहले लेखक है ।

कहानी आज सबसे अधिक लोकप्रिय गद्य-
अधिक प्रयोगशील और विकासोन्मुख गद्य-विधा भी
देशों मे विभिन्न लेखकों ने कहानी के क्षेत्र मे जित
प्रयोग किसी अन्य गद्य-विधा के क्षेत्र मे नहीं हुए हैं ।

अपनी निजी शैली का
च-कोटि का गद्य-लेखक

घटनाओं का समावेश

सीधे अपने विचार प्रकट

ए हैं—कहानी, उपन्यास,
के गद्य-साहित्य के मुख्य
प्रकार के गद्य-साहित्य का
द्य-साहित्य का विवेचन

रूपों मे निस्सन्देह सबसे
कथा-कहानी की परम्परा
मे कहानियों की पर्याप्त
और नाटक की तुलना मे
शताब्दी मे इटली मे हुआ ।
मे अमेरिका और रूस मे
नी का शास्त्रीय-विवेचन

विधा ही नहीं है, सबसे
है । ससार के विभिन्न
प्रयोग किये हैं उतने
कहानी की चार शैलियाँ

नाटक साहित्य की बहुत प्राचीन विधा है, किन्तु एकांकी बहुत नवीन विधा है। यद्यपि संस्कृत नाट्य शास्त्र में नाटक के भेदों का विवेचन करते हुए एक अंक वाले अनेक भेदों का वर्णन किया गया है, किन्तु आधुनिक-एकांकी संस्कृत के उन एक अंक वाले नाटकों की परम्परा में विकसित नहीं है। आधुनिक एकांकी का विकास इंग्लैण्ड में बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ। यह विकास सुनियोजित नहीं था, स्वतः स्फूर्त था। कहानी और एकांकी, उपन्यास और नाटक की तुलना में छोटी रचनाएँ हैं, अतः आधुनिक व्यस्त-जीवन की मनोवृत्ति के अधिक अनुकूल हैं। आधुनिक युग का व्यस्त मानव मनोरंजन के लिए भी अधिक समय नहीं निकाल पाता है, अतः वह कम समय में अधिक मनोरंजन चाहता है। कहानी और एकांकी इसके लिए उपन्यास और नाटक की तुलना में अधिक उपयुक्त हैं। यही कारण है कि कहानी ने उपन्यास को लोकप्रियता में पीछे छोड़ दिया है और एकांकी ने हजारों वर्ष पुराने नाटक को लोकप्रियता में पीछे छोड़ दिया है। एकांकी के आधुनिक लेखक की प्रवृत्ति संकलनत्रय (समय की एकता, स्थान की एकता और प्रभाव की एकता) के पालन की ओर प्रायः दिखाई देती है।

संस्कृत में नाटक के विभिन्न भेदों का विवेचन करते हुए 'भाण' नामक भेद का विवेचन किया गया है। 'भाण' में केवल एक पात्र होता है जो आकाश की ओर देखता हुआ स्वयं के उत्तर प्रत्युत्तर द्वारा नाटक की कथा को आगे बढ़ाता है। आधुनिक मोनोलॉग लगभग इसी तरह की रचना है। मोनोलॉग में किसी एक पात्र के संवाद होते हैं। 'भाण' में केवल एक पात्र होता है किन्तु मोनोलॉग में एक से अधिक पात्र हो सकते हैं। मोनोलॉग में बोलने वाला पात्र एक ही होता है अन्य पात्र खामोश रहते हैं। मोनोलॉग को हिन्दी में 'एक पात्र-भाषी एकांकी' कहा जा सकता है।

संस्कृत में नाटक को 'दृश्य' कहा गया है किन्तु रेडियो ने नाटक और एकांकी को 'श्रव्य' भी बना दिया है। रेडियो से प्रसारित होने वाले एकांकी और नाटकों में 'ध्वनि' का मुख्य स्थान होता है। रेडियो चूँकि अभिनय को

दिखा नहीं सकता है अतः ध्वनि-नाटक में विभिन्न मनोभावों और दृश्यों को, संवाद तथा विभिन्न तरह की ध्वनियों के माध्यम से प्रकट किया जाता है। जैसे रेल का अस्तित्व ध्वनि-नाटक में इंजन की सीटी तथा पहियों की आवाज के द्वारा प्रकट किया जायेगा। ध्वनि-नाटक में जहाँ 'श्रव्य मात्र' होने की सीमा है, वहाँ अनेक ऐसे दृश्य प्रस्तुत करने की सुविधा भी है जो नाटक के रंगमंच पर उपस्थित नहीं किये जा सकते।

रेडियो पर विकसित होने वाली एक और गद्य-विधा है—फीचर। इसे रेडियो रूपक भी कहा जाता है। फीचर निबन्ध और ध्वनि एकांकी के बीच की गद्य-विधा है। निबन्ध तथ्यों का सरल तथा नीरस वर्णन है, फीचर उन्हीं तथ्यों को, ध्वनि-नाटक का शिल्प ग्रहण करके रोचक तथा सरस रूप में प्रस्तुत करता है। फीचर में कथा का क्रमिक विकास होना आवश्यक नहीं है। फीचर का लेखक कुछ पात्रों तथा घटनाओं का समावेश अपनी रचना में अवश्य करता है, किन्तु उसका उद्देश्य चरित्रांकन या कथा-विकास न होकर कुछ निश्चित तथ्य या विचार प्रस्तुत करना होता है। घटनाओं तथा पात्रों की सहायता से वह तथ्य और विचारों को मूर्त-रूप प्रदान करता है और उन्हें रोचक रूप में प्रस्तुत करता है।

कहानी और एकांकी की घटनाएँ तथा पात्र काल्पनिक होते हैं, लेकिन जीवनी में वर्णित घटनाएँ और पात्र सच्चे होते हैं। घटनाओं की प्रामाणिकता जीवनी और आत्मकथा की पहली अनिवार्यता है। इसलिए जीवनी लेखक लिखने से पहले घटनाओं की प्रामाणिकता की पूरी जाँच करता है। जीवनी लेखक को घटनाओं की प्रामाणिकता की जाँच करने के बाद उन्हें प्रस्तुत करने में पूरी निष्पक्षता बरतनी होती है। जीवनी का लेखक अपने नायक के गुण और दोषों का समान भाव से वर्णन करता है। निष्पक्षता की यह समस्या आत्मकथा के लेखक के सामने अधिक कठिन होती है। उसे घटनाओं की प्रामाणिकता की जाँच करने के लिए तो परेशान नहीं होना पड़ता किन्तु अपने स्वयं के बारे में निष्पक्ष होना सहज कार्य नहीं है।

[जी]वनी और आत्मकथा में लेखक को शैली की रोचकता और सरसता का पूरा ध्यान रखना होता है। वह अपनी रचना को कल्पना के द्वारा [रो]चक नहीं बना सकता, रोचकता और सरसता के समावेश के लिए उसे [अप]नी शैली पर ही निर्भर रहना होता है।

संस्मरण अतीत की स्मृति है। यह अपने विषय में भी हो सकता है और सम्पर्क में आये किसी अन्य व्यक्ति के विषय में भी। संस्मरण के लिए निजी अनुभूति आवश्यक है। जीवनी और आत्मकथा के समान संस्मरण के लिए भी घटनाओं की प्रामाणिकता अनिवार्य है। संस्मरण के लेखक को जीवनी लेखक की तुलना में घटना-चयन की स्वतन्त्रता अधिक होती है। डायरी, गद्य-साहित्य की सभी विधाओं में सबसे अधिक अन्तरंग विधा है। अभिव्यक्ति की सहजता और निश्छलता से डायरी-रचना का स्थान पहला है। मूलतः डायरी का लेखन अपने लिए होता है, अतः इसमें व्यक्ति सब प्रकार से संकोच रहित होकर अपनी बात कहता है। मूलतः अपने लिए लिखी जाने पर भी महत्वपूर्ण पुरुषों की डायरियाँ लिखी जाने के बाद उनकी अपनी सम्पत्ति न रहकर सबकी सम्पत्ति बन जाती हैं।

यात्रावृत्त एक वर्णनात्मक रचना-विधा है। किन्तु वर्णनात्मकता के साथ रोचकता की जो धारणा जुड़ी हुई है, अच्छे लेखक का यात्रावृत्त उससे मुक्त होता है। यात्रावृत्त में विविध अनुभवों और दृश्यों के वर्णन के लिए सदैव स्थान रहता है। अच्छा लेखक इन वर्णनों से अपनी रचना को रोचक ही नहीं ज्ञानवर्द्धक भी बना देता है। यात्रावृत्त के लेखक में वर्णन-सामर्थ्य का होना बहुत जरूरी है। उसका वर्णन जितना विशद और रोचक होगा, उसकी रचना उतनी ही सफल होगी। यात्रावृत्त के लेखक के लिए शैली पर अच्छा अधिकार होना भी जरूरी है।

'रिपोर्ताज' गद्य-साहित्य की नवीनतम विधा है। रिपोर्ताज का विका[स] द्वितीय महायुद्ध के दिनों में सोवियत-लेखकों ने विशेष रूप से किया। हिटल[र] द्वारा सोवियत-संघ पर आक्रमण करने के बाद बहुत से सोवियत-लेखक अप[ने]

पितृभूमि के रक्षा-प्रयत्नों मे भाग लेने के लिए युद्ध-मोर्चों पर गये और वहां की घटनाओं, अनुभवों तथा दृश्यों का सजीव वर्णन उन्होने अपने देश के पत्रों में भेजे। उनके वर्णन समाचार पत्रों के लिए भेजी गई सामान्य रिपोर्टिंग नहीं थी, बल्कि साहित्यिक रचनाएँ थीं। ऐसी रचनाओं का नाम धीरे-धीरे 'रिपोर्ताज' हो गया। रिपोर्ताज किसी यथार्थ दृश्य, स्थान, घटना अथवा अनुभव का सजीव वर्णन होता है। यात्रावृत्त मे लेखक क्रमशः विकसित होते और बदलते दृश्य परिप्रेक्ष्यों का वर्णन करता है जबकि रिपोर्ताज का लेखक किसी एक विशिष्ट स्थान, दृश्य अथवा अनुभव का वर्णन करता है। यात्रा-वृत्त के वर्णनों मे गतिशीलता होती है जबकि रिपोर्ताज के वर्णनों मे विशदता और सूक्ष्मता होती है।

गद्य-काव्य गद्य और पद्य के बीच की रचना है। गद्य-काव्य मे वाक्य विन्यास गद्य जैसा होता है किन्तु अनुभूति की तीव्रता उसमे काव्य के समान होती है। गद्य काव्य की तुलना गीत से सहज ही की जा सकती है। गीत के समान गद्य काव्य मे भी एक भाव, अनुभूति की तीव्रता तथा शैली की मधुरता होती है, यद्यपि गीत की गेयता गद्य-काव्यों मे नहीं होती। वास्तव मे गद्य-काव्य गद्य मे लिखा गया गीत ही है और इसलिए गद्य काव्य को कभी-कभी 'गद्य गीत' भी कहा जाता है।

लेखक-परिचय

१. यशपाल

प्रसिद्ध हिन्दी कथाकार यशपाल का जन्म पंजाब में फिरोजपुर छावनी में ३ दिसम्बर १९०३ ई० को हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल कांगड़ी में हुई। बाद में वे लाहौर के नेशनल कॉलेज में भर्ती हुए। लाहौर में पढ़ते समय ही उनका सम्पर्क भगतसिंह से हुआ और यशपाल भगतसिंह के साथ-साथ क्रांतिकारी दल में सम्मिलित हो गये। १९२१ ई० के बाद वे सक्रिय रूप से क्रांतिकारी कामों में भाग लेने लगे। १९३२ ई० में पुलिस से सशस्त्र मुठभेड़ के बाद वे गिरफ्तार हुए। उन्हें १४ वर्ष की सजा मिली किन्तु १९३८ ई० में संयुक्त प्रान्त के कांग्रेसी मंत्रीमण्डल द्वारा मुक्त कर दिये गये। इसके बाद यशपाल लखनऊ में स्थायी रूप से रहने लगे। यहीं से पहले उन्होंने 'विप्लव' नामक पत्र का प्रकाशन किया और फिर 'विप्लव प्रकाशन' की स्थापना की। यशपाल का सारा साहित्य 'विप्लव-प्रकाशन' से ही प्रकाशित हुआ है। यशपाल की मुख्य कृतियाँ हैं—झूठा-सच, अमिता, दादा कामरेड, देशद्रोही, दिव्या आदि उपन्यास। उनके कुछ प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं—चि… का शीर्षक, उत्तराधिकार, धर्मयुद्ध, ज्ञानदान, तर्क का तूफान, भस्मावृ… चिनगारी आदि।

२. फणीश्वरनाथ 'रेणु'

प्रसिद्ध आंचलिक कथाकार श्री फणीश्वरनाथ 'रेणु' का जन्म बि… के पूर्णिया जिले में औराही-हिंगना नामक गाँव में ४ मार्च १९२१ ई… हुआ। विराटनगर (नेपाल) और बनारस में उन्होंने शिक्षा प्राप्त… १९४२ ई० के स्वाधीनता आन्दोलन में वे तीन वर्ष के लिए नजरबन्द… गये। उन्होंने राणाशाही के विरुद्ध होने वाली नेपाली क्रांति में भी…

लिया। १९५३ ई० के बाद से राजनीति से अलग होकर लेखन-कार्य की ओर प्रवृत्त हुए।

१९५४ ई० में उनका पहला उपन्यास 'मैला-आँचल' प्रकाशित हुआ। पहले उपन्यास के प्रकाशन के साथ ही वे हिन्दी उपन्यासकारों की पहली पंक्ति में प्रतिष्ठित हो गए। १९५७ ई० में दूसरे उपन्यास 'परती परिकथा' के प्रकाशन के बाद उनकी ख्याति और भी ज्यादा बढ़ी। अब तक रेणु के दो कहानी संग्रह (ठुमरी तथा आदिम रात्रि की महक) और पाँच उपन्यास (उन दो के अतिरिक्त जुलूस, दीर्घतपा और कितने चौराहे) प्रकाशित हो चुके हैं। रेणु हिन्दी में आंचलिक कथा-साहित्य के श्रेष्ठतम प्रतिनिधि माने जाते हैं।

३. गंगा प्रसाद पाण्डेय

श्री गंगाप्रसाद पाण्डेय छायावाद के प्रसिद्ध आलोचक थे। उनके जीवन का अधिकांश समय इलाहाबाद में व्यतीत हुआ। महादेवी वर्मा के काव्य का उन्होंने विशेष अध्ययन किया था। महादेवी वर्मा पर एक आलोचनात्मक पुस्तक लिखने के अतिरिक्त उन्होंने महादेवी वर्मा के श्रेष्ठ गीतों का सकलन-सम्पादन भी किया है। निराला के जीवन और कृतित्व पर उन्होंने 'महाप्राण निराला' नामक एक बड़ी पुस्तक लिखी है। 'छायावाद और रहस्यवाद' नामक उनकी पुस्तक हिन्दी में छायावाद का परिचय कराने वाली प्रारम्भिक पुस्तकों में से एक है। छायावादी-कविता से सम्बन्धित इन पुस्तकों के अलावा श्री पाण्डेय की 'हिन्दी कथा-साहित्य' नामक आलोचना कृति भी प्रकाशित हुई है। श्री पाण्डेय श्रेष्ठ आलोचक तो थे ही, उत्तम कथाकार भी थे। उनकी कहानियाँ आकार में छोटी होते हुए भी मार्मिक हैं।

४. महादेवी वर्मा

छायावादी काव्यधारा की सर्वश्रेष्ठ कवयित्री सुश्री महादेवी वर्मा का

६. सेठ गोविन्ददास

सेठ गोविन्ददास का जन्म १८९६ ई० में मध्यप्रदेश में जबलपुर में हुआ। सम्पन्न परिवार में जन्म लेकर भी उन्होंने हिन्दी-साहित्य-सेवा को अपने जीवन का ध्येय बनाया है। यद्यपि नाटक-एकांकी के अतिरिक्त उन्होंने अन्य विधाओं में भी रचना की है, किन्तु उनका प्रिय क्षेत्र नाटक-एकांकी का क्षेत्र ही है। वे हिन्दी में सौ से अधिक नाटक-एकांकी लिख चुके हैं। उनके प्रयत्नों से जबलपुर में घूमते हुए रंगमंच की स्थापना भी हुई है। साहित्य रचना के साथ हिन्दी प्रचार के लिए भी सेठजी सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। आजकल वे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के शासन-निकाय के अध्यक्ष हैं। भारत की राजनीति में भी उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे संसद के सबसे पुराने सदस्य हैं।

अशोक, हर्ष, प्रकाश, शशिगुप्त, कर्त्तव्य, विकास आदि उनके प्रसिद्ध नाटक हैं।

७. विष्णु प्रभाकर

प्रसिद्ध कथाकार और एकांकी लेखक विष्णु प्रभाकर का जन्म उत्तर-प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के मीरनपुर गाँव में १९१२ ई० में हुआ। उनकी शिक्षा पंजाब में हुई। बी० ए० तक शिक्षा पाने के बाद आपने हिन्दी लेखन के क्षेत्र में प्रवेश किया। श्री विष्णु प्रभाकर कुछ समय तक आकाशवाणी पर भी कार्य कर चुके हैं। आजकल वे स्वतन्त्र रहकर लेखन का ही कार्य करते हैं। उनके अनेक कहानी-सग्रह और नाटक तथा एकाकी-सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी कहानी, धरती अब भी घूम रही है, हिन्दी की बडी प्रसिद्ध कहानी है। इस नाम से उनका एक कहानी सग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। रेडियो-एकाकी के क्षेत्र में श्री विष्णु प्रभाकर ने विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की है। उनके अनेक पूरे नाटक भी प्रकाशित हो चुके हैं। 'युगे-युगे क्रांति' उनका नवीनतम प्रकाशित नाटक है। श्री विष्णु प्रभाकर के नाटक तथा एकाकी साहित्य की प्रमुख विशेषता मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व है। एकाकी, नाटक तथा कहानियो के

न १९०७ ई० में फरूक्खाबाद मे हुआ। इन्होने आरम्भ में घर पर ही शिक्षा
प्त की। छोटी अवस्था मे ही उनका विवाह हो गया किन्तु अपने अध्ययन
। क्रम उन्होने विवाह के वाद भी बनाये रखा। उच्च-शिक्षा प्राप्त करने के
ाद आप प्रयाग महिला-विद्यापीठ की प्रधानाचार्या बनी। कुछ समय तक
आप उत्तर प्रदेश विधान परिषद् की सदस्या भी रही। भारत सरकार की
ओर से उन्हे पदम भूषण की उपाधि मिली है। श्रीमती महादेवी वर्मा
सुप्रसिद्ध कवयित्री तो हैं ही, सफल गद्य-लेखिका भी हैं। जितनी प्रसिद्धि उन्होने
कवयित्री के रूप मे प्राप्त की है, उतनी ही रेखाचित्र-लेखक के रूप में भी
प्राप्त की है।

नीहार, रश्मि, दीपशिखा, साध्यगीत उनके प्रसिद्ध काव्य सकलन हैं।
अतीत के चलचित्र, क्षणदा, शृंखला की कडियाँ, स्मृति की रेखायें उनके प्रसिद्ध
गद्य-ग्रन्थ हैं।

५. हरिकृष्ण 'प्रेमी'

प्रसिद्ध नाटककार श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी' का जन्म ग्वालियर राज्य के
गुना नामक स्थान पर १९०८ ई० मे हुआ। राष्ट्र-प्रेम उन्हे पारिवारि
विरासत के रूप में मिला। श्री माखनलाल चतुर्वेदी के साथ 'त्याग-भूमि' क
सम्पादन करके उन्होने अपने साहित्यिक जीवन की शुरुआत की। पहले उन
—विता की ओर अधिक थी। उनके अनेक कविता-सग्रह प्रकाशित
। उनके कुछ प्रसिद्ध कविता-संग्रह हैं—आँखो मे, अनन्त के पथ
योन, अग्नि-गान और रूप-दर्शन। किन्तु, प्रेमीजी हिन्दी मे ऐ
टककार के रूप मे अधिक प्रसिद्ध हैं। उनका पहला नाटक 'रक्षा-
ई० में प्रकाशित हुआ था। इसमे गुजरात के बादशाह बहादु
द्ध हुमायूँ द्वारा चित्तौड की सहायता की कथा प्रस्तुत की गई है।
प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक हैं—शिवा-साधना, प्रतिशोध, स्वप्
प्राचीर, कीर्ति-स्तम्भ आदि। प्रेमीजी ने ऐतिहासिक नाटकों के
ाटकों की भी रचना की है।

६. सेठ गोविन्ददास

सेठ गोविन्ददास का जन्म १८९६ ई० में मध्यप्रदेश में जबलपुर में हुआ। सम्पन्न परिवार में जन्म लेकर भी उन्होंने हिन्दी-साहित्य-सेवा को अपने जीवन का ध्येय बनाया है। यद्यपि नाटक-एकांकी के अतिरिक्त उन्होंने अन्य विधाओं में भी रचना की है, किन्तु उनका प्रिय क्षेत्र नाटक-एकांकी का क्षेत्र ही है। वे हिन्दी में सौ से अधिक नाटक-एकांकी लिख चुके हैं। उनके प्रयत्नों से जबलपुर में घूमते हुए रंगमंच की स्थापना भी हुई है। साहित्य रचना के साथ हिन्दी प्रचार के लिए भी सेठजी सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। आजकल वे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के शासन-निकाय के अध्यक्ष हैं। भारत की राजनीति में भी उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे संसद के सबसे पुराने सदस्य हैं।

अशोक, हर्ष, प्रकाश, शशिगुप्त, कर्त्तव्य, विकास आदि उनके प्रसिद्ध नाटक हैं।

७. विष्णु प्रभाकर

प्रसिद्ध कथाकार और एकांकी लेखक विष्णु प्रभाकर का जन्म उत्तर-प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के मीरनपुर गाँव में १९१२ ई० में हुआ। उनकी शिक्षा पंजाब में हुई। बी० ए० तक शिक्षा पाने के बाद आपने हिन्दी लेखन के क्षेत्र में प्रवेश किया। श्री विष्णु प्रभाकर कुछ समय तक आकाशवाणी पर भी कार्य कर चुके है। आजकल वे स्वतन्त्र रहकर लेखन का ही कार्य करते हैं। उनके अनेक कहानी-संग्रह और नाटक तथा एकांकी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी कहानी, धरती अब भी घूम रही है, हिन्दी की बड़ी प्रसिद्ध कहानी है। इस नाम से उनका एक कहानी संग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। रेडियो-एकांकी के क्षेत्र में श्री विष्णु प्रभाकर ने विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की है। उनके अनेक पूरे नाटक भी प्रकाशित हो चुके हैं। 'युगे-युगे क्रांति' उनका नवीनतम प्रकाशित नाटक है। श्री विष्णु प्रभाकर के नाटक तथा एकांकी साहित्य की प्रमुख वैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व है। एकांकी, नाटक तथा कहानियों के

जन्म १९०७ ई० मे फर्रुखाबाद मे हुआ। इन्होंने प्रारम्भ मे घर पर ही शिक्षा
प्राप्त की। छोटी अवस्था में ही उनका विवाह हो गया किन्तु अपने अध्ययन
का क्रम उन्होंने विवाह के बाद भी बनाये रखा। उच्च-शिक्षा प्राप्त करने के
बाद आप प्रयाग महिला-विद्यापीठ की प्रधानाचार्या बनीं। कुछ समय तक
। उत्तर प्रदेश विधान परिषद की सदस्या भी रहीं। भारत सरकार की
र से उन्हें पद्म भूषण की उपाधि मिली है। श्रीमती महादेवी वर्मा
प्रसिद्ध कवयित्री तो हैं ही, सफल गद्य-लेखिका भी हैं। जितनी प्रसिद्धि उन्होंने
कवयित्री के रूप मे प्राप्त की है, उतनी ही रेखाचित्र-लेखक के रूप में भी
प्राप्त की है।

नीहार, रश्मि, दीपशिखा, सान्ध्यगीत उनके प्रसिद्ध काव्य सकलन हैं
; चलचित्र, क्षणदा, शृंखला की कड़ियाँ, स्मृति की रेखायें उनके प्रसि
य हैं।

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

प्रसिद्ध नाटककार श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी' का जन्म ग्वालियर रा
(नामक स्थान पर १९०८ ई० में हुआ। राष्ट्र-प्रेम उन्हें पारि
विरासत के रूप मे मिला। श्री माखनलाल चतुर्वेदी के साथ 'त्याग-भू
सम्पादन करके उन्होंने अपने साहित्यिक जीवन की शुरुआत की। पहले
रुचि कविता की ओर अधिक थी। उनके अनेक कविता-संग्रह प्रका
हो चुके हैं। उनके कुछ प्रसिद्ध कविता-संग्रह हैं—आँखों मे, अनन्त के
वन्दना के बोल, अग्नि-गान और रूप-दर्शन। किन्तु, प्रेमीजी हिन्दी
सिक नाटककार के रूप मे अधिक प्रसिद्ध हैं। उनका पहला नाटक '
१९३४ ई० मे प्रकाशित हुआ था। इसमे गुजरात के बादश ह
के विरुद्ध हुमायूँ द्वारा चित्तौड़ की सहायता की कथा प्रस्तुत की ग
अन्य प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक हैं—शिवा-साधना, प्रतिशोध,
भग्न-प्राचीर, कीर्ति-स्तम्भ आदि। प्रेमीजी ने ऐतिहासिक नाट
कुछ सामाजिक नाटकों की भी रचना की है।

१०. रामविलास शर्मा

प्रसिद्ध प्रगतिवादी आलोचक रामविलास शर्मा का जन्म १९१२ ई० में हुआ। उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से अंग्रेजी-साहित्य विषय लेकर एम ए की उपाधि प्राप्त की और फिर पी. एच डी. की उपाधि भी प्राप्त की। वे लम्बे समय से आगरा के बलवन्त राजपूत कालिज में अंग्रेजी साहित्य के प्राध्यापक और अध्यक्ष के रूप में कार्य कर रहे हैं। श्री रामविलास शर्मा ने हिन्दी और अंग्रेजी-साहित्य का गम्भीर अध्ययन किया है। विचारों से वे साम्यवादी हैं और प्रगतिशील लेखक संघ के प्रमुख आयोजक रहे हैं। समालोचनात्मक निबन्धों के उनके अनेक संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उन्होंने दो वर्ष तक 'समालोचक पत्र' का सम्पादन भी किया है। लखनऊ में पढ़ते समय श्री रामविलास शर्मा महाकवि निराला के निकट सम्पर्क में रहे थे। उनकी नवीनतम प्रकाशित रचना महाकवि निराला की विशद जीवनी है। श्री रामविलास शर्मा की इस कृति की हिन्दी में बहुत प्रशंसा हुई है। प्रेमचन्द पर भी उनकी दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आलोचक होने के साथ श्री रामविलास शर्मा भावुक कवि भी रहे हैं। उनकी कविताएँ 'रूप-तरंग' नाम से प्रकाशित हुई हैं।

११. महादेवभाई देसाई

महात्मा गांधी के निजी सचिव श्री महादेव भाई देसाई का जन्म गुजरात के बलसार तालुका के अन्तर्गत दिहण में १८९२ ई० में हुआ। १९१७ में वे महात्मा गांधी के सम्पर्क में आये और तब से पच्चीस वर्ष तक,

अलावा उन्होंने उपन्यास भी लिखे हैं। ढलती रात और स्वप्नमयी उनके प्रकाशित उपन्यास हैं। 'जाने-अनजाने' के नाम से प्रकाशित पुस्तक में उनके रेखाचित्र और संस्मरण संकलित हैं।

८. रामवृक्ष बेनीपुरी

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म बिहार प्रान्त के मुजफ्फरपुर जिले के बेनीपुरी गाँव में १९०२ ई० में हुआ। बचपन में ही माता-पिता का देहान्त हो जाने के कारण उन्हें अपने जीवन का स्वयं निर्माण करना पड़ा। स्वाधीनता आन्दोलन में भाग लेने के कारण वे अनेक बार जेल भी गये। श्री बेनीपुरी सफल पत्रकार और श्रेष्ठ लेखक थे। पटना से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'नईधारा' का उन्होंने काफी समय तक सम्पादन किया। १९६८ ई० में श्री बेनीपुरी का देहान्त हो गया।

श्री बेनीपुरी बहुमुखी प्रतिभा के कलाकार थे। उपन्यास, नाटक, रेखाचित्र, कहानी, यात्रा-वर्णन आदि सभी प्रकार की रचनाएँ लिखने में उन्होंने सफलता प्राप्त की। तथागत, अम्बपाली, पैरों में पंख बाँधकर, गेहूँ और गुलाब, माटी की मूरतें आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

बच्चन

श्री हरिवंशराय 'बच्चन' का जन्म इलाहाबाद में २७ नवम्बर [illegible] को हुआ। उनकी शिक्षा इलाहाबाद में ही हुई। इलाहाबाद विश्ववि[illegible] एम. ए. करने के बाद वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी के प्र[illegible] रहे। १९५२ ई० में वे विदेश गये और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में [illegible] करके उन्होंने पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। विदेश से वापस [illegible] दिल्ली में विदेश मंत्रालय में हिन्दी अधिकारी बने। १९६६ ई० में वे [illegible] के सदस्य मनोनीत हुए। बच्चन को उनकी रचनाओं के लिए अनेक पुरस्कार मिल चुके हैं।

साहित्य के क्षेत्र में बच्चन की प्रसिद्धि १९३५ ई० में 'मधुशाला' के प्रकाशन के साथ हुई। तब से बच्चन के लगभग ४० कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। कविता के साथ उन्होंने गद्य रचना भी की है। उनकी नवीनतम प्रकाशित गद्य-रचना है 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ मैं।" यह बच्चन की आत्मकथा का पहला खण्ड है। इस वर्ष बच्चन को सोवियत-संघ का एक साहित्य-पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।

१०. रामविलास शर्मा

प्रसिद्ध प्रगतिवादी आलोचक रामविलास शर्मा का जन्म १९१२ ई० में हुआ। उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से अंग्रेजी-साहित्य विषय लेकर एम. ए. की उपाधि प्राप्त की और फिर पी. एच. डी. की उपाधि भी प्राप्त की। वे लम्बे समय से आगरा के बलवन्त राजपूत कालेज में अंग्रेजी साहित्य के प्राध्यापक और अध्यक्ष के रूप में कार्य कर रहे हैं। श्री रामविलास शर्मा ने हिन्दी और अंग्रेजी-साहित्य का गम्भीर अध्ययन किया है। विचारों से वे साम्यवादी हैं और प्रगतिशील लेखक संघ के प्रमुख आयोजक रहे हैं। समालोचनात्मक निबन्धों के उनके अनेक संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उन्होंने दो वर्ष तक 'समालोचक पत्र' का सम्पादन भी किया है। लखनऊ में पढ़ते समय श्री रामविलास शर्मा महाकवि निराला के निकट सम्पर्क में रहे थे। उनकी नवीनतम प्रकाशित रचना महाकवि निराला की विशद जीवनी है। श्री रामविलास शर्मा की इस कृति की हिन्दी में बहुत प्रशंसा हुई है। प्रेमचन्द पर भी उनकी दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आलोचक होने के साथ श्री रामविलास शर्मा भावुक कवि भी रहे हैं। उनकी कविताएँ 'रूप-तरंग' नाम से प्रकाशित हुई है।

११. महादेवभाई देसाई

[illegible] गांधी के निजी सचिव श्री महादेव भाई देसाई का जन्म गुजरात के बलसार ताजुका के अन्तर्गत जिले में १८९२ ई० में हुआ। १९१७ में वे महात्मा गांधी के सम्पर्क में आए और तब से पर्यन्त बने [illegible]

१९४२ ई० मे अपनी मृत्यु के समय तक वे गांधीजी के निकट सम्पर्क मे रहे। इन २५ वर्षों मे गाधीजी के जीवन मे जो भी महत्वपूर्ण घटना घटित हुई, जिन-जिन व्यक्तियों का गाधीजी से सम्पर्क रहा और जो-जो महत्वपूर्ण पत्र गाधीजी ने लिखे, उन सबका विवरण महादेव देसाई ने अपनी डायरी मे लिखा है। यह विवरण या महादेव देसाई की डायरी एक विशाल ग्रंथ है जो पांच भागो मे प्रकाशित हुआ है। सम्बन्धित वर्षों के लिए यह गाधीजी के जीवन का प्रामाणिक विवरण है। श्री महादेव देसाई गुजराती के अलावा हिन्दी, मराठी और बगला के भी अच्छे जानकार थे। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और शरतचन्द की अनेक कृतियो का अनुवाद उन्होने गुजराती मे किया है। उन्होने जवाहर लाल नेहरू की 'मेरी कहानी' का अनुवाद भी किया है। उनकी मौलिक रचनाओ मे बारडोली सत्याग्रह का इतिहास और वल्लभ भा पटेल का जीवन-चरित्र प्रसिद्ध है।

१२. प्रेमचन्द

प्रेमचन्द का जन्म ३१ जुलाई १८८० ई० को बनारस के पास ल
गाँव मे हुआ। उनका असली नाम धनपतराय था, प्रेमचन्द नाम उन्हो
मे साहित्य-रचना के लिए रखा। पारिवारिक गरीबी के कारण उन्हे
स्कूल की परीक्षा देने के बाद ही सरकारी नौकरी करने के लिए विवश
पड़ा। १९२१ ई० के असहयोग आन्दोलन मे उन्होने सरकारी नौ
त्याग-पत्र दे दिया। बाद में उन्होने बनारस मे सरस्वती प्रेस की
की। एक वर्ष के लिए उन्होने बम्बई मे 'अजन्ता सिनेटोन' नाम
कम्पनी मे भी काम किया। ८ अक्टूबर १९३६ ई० को बनारस
देहान्त हुआ।

प्रेमचन्द हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कथाकार हैं। उन्होने लग
कहानियाँ लिखी जो मानसरोवर (आठ भाग) गुप्तधन और
संग्रहो मे सकलित है। उनके उपन्यासो मे सेवासदन, रंगभू

गबन, कर्मभूमि और गोदान अधिक प्रसिद्ध हैं। उन्होंने कुछ नाटकों की रचना भी की है। अंग्रेजी और उर्दू भाषाओं से अनेक ग्रंथों का उन्होंने अनुवाद भी किया। साहित्य-रचना के साथ-साथ उन्होंने हंस (मासिक और जागरण साप्ताहिक-पत्र) का सम्पादन भी किया।

१३. श्री राहुल सांकृत्यायन

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन का जन्म उत्तर-प्रदेश के आजमगढ़ जिले में १८९३ ई० में हुआ। राहुलजी का जीवन बड़ा विचित्र रहा है। छोटी अवस्था में ही वे अपना घर छोड़कर प्रवासी बन गये थे। साधुओं के साथ उन्होंने सारे भारत का भ्रमण किया। बाद में अनेक बार उन्होंने विदेश यात्रा भी की। स्वाधीनता आन्दोलन में कई बार वे जेल भी गये। राहुलजी संसार की अनेक भाषाओं और बौद्ध-साहित्य तथा संस्कृति के विश्व प्रसिद्ध विद्वान थे। उन्होंने कई बार तिब्बत जाकर बौद्ध-संस्कृति से सम्बन्धित अनेक विलुप्त ग्रंथों का पुनरुद्धार किया। राहुलजी का देहान्त १९६३ ई० में हुआ।

राहुलजी की प्रकाशित पुस्तकों की संख्या लगभग १५० है। संस्कृत तथा पाली में अनेक ग्रंथों के अनुवाद के साथ उन्होंने मौलिक ग्रंथ रचना भी पर्याप्त संख्या में की हैं। वोल्गा से गंगा, मध्यएशिया का इतिहास, मेरी जीवन यात्रा (५ भागों में) दर्शन-दिग्दर्शन, सिंह सेनापति आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

१४. रायकृष्णदास

श्री रायकृष्ण दास का जन्म १८९२ ई० में काशी के एक प्रसिद्ध वैश्य कुल में हुआ। उनके पिता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के फुफेरे भाई थे। रायकृष्ण दास बचपन से बड़े ही अध्ययनशील और प्रतिभाशाली रहे हैं। बंगला-साहित्य का उन्होंने गहरा अध्ययन किया है। उनके गद्य-काव्यों का प्रसिद्ध संकलन

'साधना' रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रसिद्ध रचना 'गीतांजलि' से प्रभावित है।
बंगला और हिन्दी के अतिरिक्त आप संस्कृत और अंग्रेजी के भी अच्छे विद्वान
हैं। ललित कलाओं से उन्हें विशेष प्रेम है। रायकृष्ण दास द्वारा संचालित
'कला-भवन' सारे देश के कला-प्रेमियों में विख्यात है। इस भवन में भारतीय
चित्रकला और मूर्तिकला की अनेक महत्वपूर्ण कृतियाँ सुरक्षित हैं।

'साधना', 'प्रवाल', 'संलाप' आदि आपके गद्य-काव्य संकलन हैं। इ
अलावा 'भावुक' आपका कविता संकलन है। आपके दो कहानी संग्रह
प्रकाशित हुए हैं।

निरापद

(लेखक—यशपाल)

[साहित्य की प्रतिष्ठित गद्य-विधाओं के बीच कहानी अपेक्षाकृत नवीन साहित्य-विधा है। कथा कहानी की परम्परा बहुत प्राचीन है किन्तु आधुनिक कहानी का आरम्भ १९ वीं शताब्दी के आरम्भ में अमेरिका और रूस में हुआ। १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही कहानी आधुनिक-साहित्य की प्रमुखतम विधा बन गई। आज कहानी विश्व में सब जगह सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्य विधा है।

निरापद एक व्यंग्यात्मक कहानी है। इसमें हमारे कानून की असंगति पर बड़ी कुशलता से प्रकाश डाला गया है। कानून की असंगति एक ईमानदार को चोर बनने पर किस तरह मजबूर कर देती है लेखक यह बड़ी कुशलता से दिखलाता है। सूरज पहाड़ से आया हुआ एक देहाती है। वह शहर में परिश्रम करके जीवित रहना चाहता है किन्तु उसे कोई काम नहीं मिलता है। वह अपराधी बनकर ही जीवित रह सकता है। लेखक ने हमारे समाज की इस विचित्र स्थिति पर बड़ी सफलता से प्रकाश डाला है।]

"अबे, यह तेरे घर की चौपाल है?" सिपाही ने विक्टोरिया पार्क की एक बेंच पर सोए हुए सूरज को बांह झटककर उठा दिया।

सूरज गहरी नींद में था। सर्दी के कारण घुटने समेटे, सिकुड़ा हुआ भी था। बाग में खाली पड़ी बेंच पर सो जाने से सिपाही के नाराज होने का कारण वह समझ न सका। बेंच पर सोने से पहले वह यही सोच-समझकर वहाँ सोया था कि उस जगह सो जाने में कोई आपत्ति नहीं करेगा।

सिपाही ने सूरज की नींद तोड़ने के लिए उसे कान से पकड़, उ
सिर झिंझोड़कर बहुत निरादर से धमकाया, "अबे बोलता क्यों नहीं, गूँगा
घर तेरा कहाँ है ? क्या काम करता है ?"

सुध सँभाल सकने पर सूरज ने परिस्थिति का संकट समझा। वह
पहले सरकार के प्रतिनिधि सिपाही के सामने आदर प्रकट करने के लिए
खड़ा हो गया। पाँच कक्षा तक स्कूल में पढ़ते समय जब मास्टर साहब ना
होकर उसे मारने पीटने के लिए बुलाते थे, वह इसी तरह मार खाने के
चुपचाप खड़ा हो जाता था।

सूरज ने साहस से सिपाही को उत्तर दिया, "हुजूर, घर पहाड़ में
नौकरी ढूँढने आया हूँ।"

"सब चोर नौकरी ढूँढने ही आते हैं" सिपाही ने अविश्वास प्र
किया, "किसके यहाँ ठहरा है ? उसका पता बता। लाट साहब की त
सरकारी पारक में बिरच पर सो रहा है।"

सूरज ने गिड़गिड़ाकर बताया कि वह तीन दिन पहले पहाड़ से आ
था। पड़ोस के गाँव के एक आदमी के यहाँ दो दिन ठहरा था। जब उसने अ
रखने से इन्कार कर दिया तो सुबह से जगह-जगह घूम रहा था। नौकरी न
मिल सकी थी।

सिपाही ने उसकी जेब टटोल कर देखी। जेब मे बस कागज़ का ए
टुकड़ा था जिस पर चन्दरसिंह पहाड़ी का पता था। चन्दरसिंह 'लालबाग़'
जगतसिंह ठेकेदार की कोठी पर चौकीदारी करता था। चन्दरसिंह का अपन
चचेरा भाई भी नौकरी खोजने आया हुआ था। चन्दरसिंह किस-किस क
अपने घर बैठाकर खिलाता ! उसने सूरज को दो दिन टिकाकर अपना रास्त
नापने को कह दिया था।

सूरज ने अपना अपराध स्वयं ही स्वीकार कर लिया। वह बेरोज़गा
और बेघरबार है। यही तो दफा १०९ का अपराध है।

सरकार जानती है, साधन और सम्पत्ति के बिना कोई जीवित नहीं रह सकता इसलिए प्रजा की रक्षा के लिए सम्पत्ति की रक्षा करना सरकार का धर्म है। बेघरबार और बेरोज़गार सम्पत्तिहीनों से सम्पत्तिवानों को सदा ही भय और आशंका है। जीवित रह सकने के लिए वे किसी न किसी की सम्पत्ति पर हाथ मारेंगे ही। सरकार की दृष्टि में यह बात स्वाभाविक है, इसलिए सरकार ने उन्हें बाँधकर रखने का कानून बना दिया है।

सूरज की जेब में कुछ न था पर सिपाही के पास उसे कोतवाली ले जाए बिना चारा ही क्या था? टके-पैसे का लाभ न हो तो कार-गुज़ारी सो हो!

सूरज दरवाजे में लोहे के सींखचे लगी कोठरी में बन्द किये जाते समय काँप रहा था। पछता रहा था, आना घर छोड़कर क्यों आया; पर घर वह शौक से छोड़कर नहीं आया था। बन्द कर दिया गया तो कई मिनट उसके आँसू बहते रहे। ताला लगाकर कोठरी में बन्द कर दिए जाने पर सूरज को लगा कि उसे सन्दूक में बन्द कर दिया गया है या धरती के नीचे गाड़ दिया गया है। सोच रहा था, इससे तो पहाड़ में भूखा मर जाता तो भी अच्छा था।

कुछ मिनट बाद सूरज ने अनुभव किया कि वह कैद की कोठरी में, पार्क की बेंच पर काटते मच्छरों और ओस की ठिठुरन की अपेक्षा बुरी अवस्था में नहीं है परन्तु मन किसी अज्ञात, कल्पनातीत भय से दबा जा रहा था।

दूसरे दिन सुबह एक पहर दिन चढ़े एक सिपाही ने उससे कड़े स्वर में पूछा, "क्यों बे, चार आने का क्या लेगा?"

सूरज कुछ न समझकर सिपाही की ओर कातर भाव से देखता रहा।

सिपाही ने समझाया—सरकार हवालात में बन्द लोगों को चार आने खुराक के लिये देती है। वह क्या खाना चाहता है?

सिपाही की बात समझकर सूरज को और भी विस्मय हुआ, पि
कितने ही दिनों में ऐसा सत्कार तो उसका किसी ने नहीं किया था।

सचमुच, दाल रखी दो रोटियाँ उसके हाथों में थमा दी गईं।

सूरज ने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते हुए और दया की भिक्षा माँगते हुए कोतवाली के मुन्शीजी के सामने और फिर मजिस्ट्रेट के भी सामने अपने निरपराध होने की जो दुहाई दी थी, वह उसके बेघरबार होने और बेरोज़गार होने के रूप में अपने अपराध की स्वीकृति भी थी।

सूरज इस बात का कोई कारण न बता सका कि वह धर्मशाला में न ठहरकर पार्क में क्यों सोया हुआ था, और साथ कोई सामान न होने से धर्मशाला के मुन्शीजी ने उसे क्यों वहाँ टिकने नहीं दिया था।

× × ×

जेल की हवालात में सूरज का मन भयभीत था। वह लोहे के जंगलो और ईंटों की ऊँची दीवारों से निकलकर भाग जाने के लिए छटपटा रहा था। उसका मन चाहता था, वह गली-बाजार में पहुँच जाए और दुकान-दुकान और घर-घर घूमकर पूछे—हुज़ूर, नौकर चाहिए ? इस प्रकार तीन दिन घूमने का अनुभव भी उसे याद था। वह भूखा दुकान-दुकान और घर-घर घूमता रहा था। किसी दरवाजे के सामने जाकर संकोच से सकपकाते हुए वह पूछता—नौकरी चाहिए, हुज़ूर ?

अधिकांश जगह संक्षिप्त उत्तर था—नहीं। कई जगह उसका नाम-धाम पूछकर प्रश्न किया जाता, पहले कहाँ काम किया है। कोई तुम्हारा ज़ामिन है ? एक-दो समझदार लोगों ने यह भी सुझाया कि थाने में जाकर अपना नाम-धाम लिखाकर पुर्जा लिखा लाओ कि इस आदमी का ठौर-ठिकाना ठीक है।

जेल की हवालात में उसे भूख लगते ही गेहूँ की रोटी और दाल पीतल के तसले-कटोरों में मिल जाती थी। रात में सोने के लिए निर्विकार जग

थी। ओढ़ने के लिए चादर और बिछाने के लिए मूंज का टाट था। मन पर जेल का आतंक था परन्तु उसे सुख ही सुख था।

दिन में वह दूसरे हवालातियों की बातें और मजाक सुनता रहता। दो-चार आदमी उसकी तरह मुँह लटकाए थे, शेष मजे में थे। हवालाती लोग आपस में कानून के दाव-पेंचों और अदालत में सफाई देने के ढंग एक-दूसरे को बताते रहते थे।

जेब काटने के अपराध में पकड़ा गया आदमी चोरी के अपराध में पकड़े गये आदमी को घृणा से देखता था और डकैती के अपराध में पकड़कर लाया गया जेब काटने के अपराधी के सामने अकड़कर चलता था। सबसे हीन स्थिति थी सूरज और उस जैसे अपराधियों की, जो अपराध-जगत के किसी भी कौशल या वीरता का गर्व नहीं कर सकते थे। उनके लिए 'लुटिया-चोट्टे' और 'बछिया के ताऊ' का तिरस्कारपूर्ण सम्बोधन था। दूसरे लोग उनकी कायरता देखकर हँस देते थे।

पन्द्रह दिन तक सूरज की जमानत देने कोई नहीं आया तो उसे अदालत में ले जाकर सुना दिया कि उसे बेरोजगार और बेघरबार घूमने के अपराध में एक बरस कड़ी जेल की सजा सुना दी गई है। कड़ी जेल का अर्थ था, उसे जेल में कड़ा परिश्रम करना पड़ेगा।

सजा का हुक्म हो जाने पर सूरज को दूसरे हाते और बैरक में बदल दिया गया। वह घर से जो फटे-पुराने कपड़े पहनकर आया था उनकी जगह उसे जेल की फटी-पुरानी वर्दी दे दी गई। अब उसे कभी बान बटना पड़ता, कभी दूसरे कैदियों के साथ कुएँ से पानी निकालने के लिए चरखी खींचना पड़ता। कुछ दिन चक्की भी पीसनी पड़ी। कभी उसे जेल की तरकारी की खेती में काम करना पड़ता।

सूरज के लिए कोई काम कठिन न था। काम ही तो वह करना चाहता था। ढूँढ़ने से काम नहीं मिला था, अब जबरदस्ती करवाया जा रहा था। यह जबरदस्ती उसे खल नहीं रही थी। नौ छटांक रोटी दाल और तरकारी

की चिन्ता न थी। दुःख था तो केवल मन में बड़े अपमान का कि वह जेल में था और गांव के बैरी उसे दफा १०९ का 'चोरा-बेकार' आदमी समझकर तिरस्कार से देखते थे।

× × ×

दस मास जेल काट लेने और दो मास की मुआफी मिलने पर सूरज जब जेल से छूट रहा था तो मन में उत्साह था कि अब वह बाहर घूम-फिरकर नौकरी ढूँढ लेगा। वह लखनऊ में ही गिरफ्तार हुआ था, इसलिए छूटते समय उसे घर पहुँचाने तक का किराया मिलने का भी प्रश्न न था। जेल के नियम के अनुसार उसे दिन भर की खुराक के लिए केवल छह आने दे दिये गये और उसके वही फटे-पुराने कपड़े जिन्हें पहनकर वह जेल आया था, जेल के कपड़े वापिस लेकर, लौटा दिए गए।

सूरज दस मास जेल में बिताकर नौकरी ढूँढने चला तो झिझक और संकोच और भी अधिक था। पहले कहाँ, क्या काम करता था? इस प्रश्न का उत्तर वह क्या देता? इस प्रश्न की सार्थकता की छाप उसके चेहरे पर बहुत स्पष्ट थी। ऐसी अवस्था में उसके प्रति किसे विश्वास होता? यह जान लेने पर कि वह जेल से छूटकर आया है, उसे नौकर रखने की मूर्खता कौन करता?

रात का पहला पहर बीतते-बीतते सूरज फिर उसी संकट की अवस्था में था। किफायत करके दो आने बचा लेने के कारण वह भूखा भी था। इस बार वह उतना अनुभवहीन न था कि पार्क में जाकर सो जाता और फिर सीधा जेल पहुँच जाता।

जेल में विशेष दुःख न पाने पर भी बन्धन का भय और अपमान की आशंका थी। परन्तु मन यह भी सोच रहा था कि यों भूखे और बेआसरे रहने से तो जेल में ही आराम था। जेल में पाए ज्ञान के आधार पर सूरज रात बिताने के लिए लखनऊ के 'चारबाग' स्टेशन के तीसरे दर्जे के मुसाफिरखाने में जाकर लेट रहा।

रातभर के सोच विचार के पश्चात् दूसरे दिन सूरज को नौकरी की तलाश के लिए घूमने फिरना व्यर्थ जान पड़ रहा था। वह समझ चुका था, नौकरी उसे नहीं मिलेगी। उसे शरण केवल जेल में मिल सकती है परन्तु स्वयं जेल में जाकर स्थान माँगने से तो जेल में स्थान नहीं मिलता।

सूरज संध्या समय फिर विक्टोरिया पार्क की बेंच पर जा लेटा। प्रतीक्षा में था कि सिपाही उसे जेल लिवा ले जाने के लिए बुलाने आएगा। लोग कहते हैं, मौत को ढूँढने से मौत भी बगल बचाकर निकल जाती है। सूरज के सोने-जागने रात बीत गई। उस रात सिपाही उसे पकड़ने आया ही नहीं।

भूख से व्याकुल सूरज का तीसरा दिन बीतना और भी कठिन हो गया। निरुत्साह से उसने तीन-चार जगह काम माँगने के लिए बात की। पिछले दिन बचाए धन में से दो पैसे के चने लेकर चबाए। ऐसा संकट तो जेल में एक दिन भी नहीं झेला था। पार्क की बेंच पर लेटकर ओस और मच्छरों का शिकार बनने से क्या लाभ था?

सूरज फिर स्टेशन पर तीसरे दर्जे के मुसाफिरखाने में जा पहुँचा। मुसाफिरखाने में एक साथ यात्रा करने वाले लोग एक-एक जगह घेरकर बैठे या बिस्तर लगाकर लेटे हुए थे। कुछ लोग रोटी, पूरी या सत्तू खा रहे थे। कुछ बीड़ी-सिगरेट पीकर या केवल बतियाकर समय काट रहे थे। कुछ नींद में बेखबर खुर्राटे लेते सो रहे थे।

एक भला आदमी लम्बाई में दोहरी की हुई दरी पर खेस बिछाए अपना सामान तकिए की तरह सिर के नीचे दबाए लेटा हुआ था। गरमी के कारण धोती घुटनों तक उठाली थी। कुर्ता भी उतार दिया था। केवल बंडी पहने था। उसके पास की जगह खाली थी। सूरज कुछ स्थान छोड़कर वहीं फर्श पर लेट गया। कभी थकावट से उसकी आँखें मुँदने लगतीं और कभी भूख से आँखें खोल सोचने लगता, करे तो क्या करे।

दारोगा साहब ने फिर पूछा, "अबे, बटुआ निकालकर भाग क्यों नहीं गया ? वहाँ ही बैठा रहा ? जेल जाने का शौक है ?

सूरज फिर भी चुप रहा।

दारोगा साहब ने एक और कश खींचा और पूछा, "पहले कभी चोरी की है ?"

सूरज ने इनकार में सिर हिला दिया।

दारोगा साहब ने फिर पूछा, "बटुआ तूने चुराया था ?"

सूरज सोच चुप रहा। प्रश्न दुबारा पूछे जाने पर उसने स्वीकृति में सिर झुका दिया।

दारोगा साहब ने उसकी ओर झुककर ध्यान से देखकर पूछा, "क्यों क्या जेल जाना चाहता है ?"

सूरज ने तुरन्त स्वीकृति में सिर झुका दिया।

दारोगा साहब के चेहरे पर मुस्कान आ गई, बोले, "बिना कुछ करे
घरे ही जेल जाएगा ? जेल में क्या हराम की रोटी रखी है ? उसके लि
खाने में दम चाहिए बेटा !"

दारोगा साहब ने सूरज को पकड़कर लाने वाले सिपाही की
देखकर संबोधन किया, "जमादार, यह चोर की शक्ल है ? निरे पोंगे
। जेल में क्या ऐसे कूड़े-कबाड़ को भेजा जाता है ? हराम की
लिए झूठा जुर्म कबूल कर रहा है। निकालो इस नाकारे को यहाँ से
त देकर।"

दारोगा साहब के हुक्म से सूरज को थाने के पिछवाड़े के दरवा
गरदनियाँ देकर निकाल दिया गया।

इस बार सूरज को जेल में शरण देने से भी इनकार कर दिया
पुलिस जान गई थी कि वह 'निरापद' है।

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. निरापद कहानी के कथानक को संक्षेप में लिखिए और कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिये।

२. सूरज का चरित्र चित्रण कीजिये और बताइये कि किन परिस्थितियों ने उसे दूसरी बार जेल जाने के लिए तैयार कर दिया।

३. 'निरापद' कहानी का उद्देश्य है—

(क) बेकारी की समस्या पर प्रकाश डालना।

(ख) पुलिस के अत्याचारों का वर्णन करना।

(ग) वर्तमान कानूनों की असंगति पर प्रकाश डालना।

(घ) समाज की दशा का वर्णन करना।

सही विकल्प के आगे ✓ का निशान लगाइये।

आंचलिक कहानी

पंचलाइट

(ले० फणीश्वरनाथ 'रेणु')

[आंचलिकता स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी की प्रमुख प्रवृत्ति है। आंचलिकता की प्रवृत्ति का अर्थ है किसी प्रदेश के अंचल-विशेष का कहानी अथवा उपन्यास मे विशद चित्रण। इसके लिए लेखक उस अंचल-विशेष की भाषा-बोली के प्रयोग के साथ लोकगीत तथा लोक विश्वासो का भी सायक् चित्रण करता है। आंचलिकता की प्रवृत्ति के माध्यम से हिन्दी-कथा-साहित्य मे पहलीबार उनके अछूते प्रदेशो और अंचलो का चित्रण संभव हुआ है।

प्रस्तुत कहानी प्रसिद्ध आंचलिक कथाकार श्री फणीश्वरनाथ 'रेण की रचना है। इस रचना मे लेखक ने ग्राम-निवासियों के मन की सरलत स्वाभिमान और आह्लाद का सुंदर चित्रण किया है। एक पेट्रोमैक्स माध्यम से लेखक ने ग्राम-मन की विविध भावनाओ का चित्रण कर अच्छी सफलता प्राप्त की है। पेट्रोमैक्स न जला पाने पर उनकी निराशा पेट्रोमैक्स जल जाने पर उनका भोला आह्लाद दोनों का ही चित्रण में प्रभावशाली हुआ है।]

पिछले पन्द्रह महीने से दण्ड-जुरमाने के पैसे जमा करके महतो पेट्रोमैक्स खरीदा है इस बार, रामनवमी के मेले मे। गाव (आठ पंचायतें हैं। हरेक जाति की अलग-अलग 'सभाचट्टी' है तो मे दरी, जाजिम, सतरजी और पेट्रोमैक्स, हैं—पेट्रोमैक्स पंचलाइट कहते है।

पंचलाइट खरीदने के बाद पचो ने मेले में ही तय किया— बच गए हैं, इससे पूजा की सामग्री ली जाय—बिना नेमटेम के कल

यह बात नहीं कि गाँव-भर में कोई पंचलैट बालनेवाला नहीं। हरेक पंचायत में पचलैट है, उसके जलाने वाले जानकार हैं। लेकिन सवाल है कि पहली बार नेम-टेम करके, शुभ-लाभ करके, दूसरी पंचायत के आदमी की मदद से पचलैट जलेगा? इससे तो अच्छा है कि पचलैट पड़ा रहे। जिन्दगी-भर ताना कौन सहे! बात-बात में दूसरे टोले के लोग कूट करेंगे— तुम लोगों का पंचलैट पहली बार दूसरे के हाथ से""! न, न! पंचायत की इज्जत का सवाल है। दूसरे टोले के लोगों से मत कहिये!

चारों ओर उदासी छा गई। अँधेरा बढ़ने लगा। किसी ने अपने घर में आज ढिबरी भी नहीं जलाई थी।""आज पचलैट के सामने ढिबरी कौन बालता है!

सब किये-कराये पर पानी फिर रहा था। सरदार, दीवान और छड़ीदार के मुँह में बोली नहीं। पंचों के चेहरे उतर गये थे। किसी ने दबी हुई आवाज में कहा—कल-कब्जे वाली चीज का नखरा बहुत बड़ा होता है।

एक नौजवान ने आकर सूचना दी—राजपूत टोली के लोग हँसते-हँसते पागल हो रहे हैं। कहते हैं, कान पकड़कर पचलैट के सामने पाँच बार उठो-बैठो, तुरन्त जलने लगेगा।

पंचों ने सुनकर मन-ही-मन कहा--भगवान ने हँसने का मौका दिया है, हँसेंगे नहीं? एक बूढ़े ने आकर खबर दी, रूदल साह बनिया भारी बतंगड़ आदमी है। कह रहा है, पचलट का पम्पू जरा होशियारी से देना!

गुलरी काकी की बेटी मुनरी के मुँह में बार-बार एक बात आकर मन में लौट जाती है। वह कैसे बोले? वह जानती है कि गोधन पचलैट बालना जानता है। लेकिन गोधन का हुक्का-पानी पंचायत से बंद है। मुनरी की माँ ने पंचायत में फ[illegible] ी थी, कि गोधन रोज उसकी बेटी को देखकर 'सलम-सलम' वाला सलीमा का गीत गाता है—हम तुमसे मोहोब्बत करके सलम! पंचों की निगाह पर गोधन बहुत दिन से चढ़ा हुआ था। दूसरे गाँव से आकर

पंचलैट के सिवा और कोई रट नहीं, कोई दूसरी बात नहीं । सरदार ने गुड़गुड़ी पीते हुए कहा—दुकानदार ने पहले सुनाया, पूरे पांच कौड़ी पांच रुपया । मैंने कहा कि दुकानदार साहेब, यह मत समझिए कि हम लोग एकदम देहाती हैं । बहुत-बहुत पंचलैट देखा है । इसके बाद दुकानदार मेरा मुंह देखने लगा । बोला, लगता है, आप जाति के सरदार हैं । ठीक है, जब आप सरदार होकर खुद पंचलैट खरीदने आए हैं तो जाइए, पूरे पांच कौड़ी में आपको दे रहे हैं ।

दीवानजी ने कहा—अलबत्ता चेहरा परखने वाला दुकानदार है । पंचलैट का बक्सा दुकान का नौकर देना नहीं चाहता था । मैंने कहा, देखिए दुकानदार साहेब, बिना बक्सा पंचलैट कैसे ले जायेंगे । दुकानदार ने नौकर को डांटते हुए कहा, क्यों रे ! दीवानजी की आंख के आगे 'धुरखेल' करता है; दे दो बक्सा !

टोले के लोगों ने अपने सरदार और दीवान को श्रद्धा-भरी निगाहों से देखा । छड़ीदार ने औरतों की मण्डली में सुनाया—रास्ते में सन्न-सन्न बोलता था पंचलैट !

लेकिन " ऐन मौके पर 'लेकिन' लग गया ! रुदल साह बनिये की दुकान से तीन बोतल किरासन तेल आया और सवाल पैदा हुआ, पंचलैट को जलायेगा कौन ।

यह बात पहले किसी के दिमाग में नहीं आई थी । पंचलैट खरीदने के पहले किसी ने न सोचा । खरीदने के बाद भी नहीं । अब, पूजा की सामग्री चौके पर सजी हुई है, कीर्तनिया लोग खोल-ढोल करताल खोलकर बैठे हैं, और पंचलैट पड़ा हुआ है । गांववालों ने आज तक कोई ऐसी चीज नहीं खरीदी, जिसमें जलाने बुझाने का झंझट हो । कहावत है न, भाई रे; गाय लूं ? तो दुहे कौन ?...... लो मजा ! अब इस कल-कब्जेवाली चीज को कौन बाले !

यह बात नहीं कि गाँव-भर में कोई पंचलैट बालनेवाला नहीं। हरेक पंचायत में पचलैट है, उसके जलाने वाले जानकार हैं। लेकिन सवाल है कि पहली बार नेम-टेम करके, शुभ-लाभ करके, दूसरी पंचायत के आदमी की मदद से पचलैट जलेगा ? इससे तो अच्छा है कि पंचलैट पड़ा रहे। जिन्दगी-भर ताना कौन सहे ! बात-बात में दूसरे टोले के लोग कूट करेंगे— तुम लोगों का पंचलैट पहली बार दूसरे के हाथ से""! न, न ! पंचायत की इज्जत का सवाल है। दूसरे टोले के लोगों से मत कहिये !

चारों ओर उदासी छा गई। अंधेरा बढ़ने लगा। किसी ने अपने घर में आज ढिबरी भी नहीं जलाई थी।""आज पचलैट के सामने ढिबरी कौन बालता है !

सब किये-कराये पर पानी फिर रहा था। सरदार, दीवान और छड़ी-दार के मुँह में बोली नहीं। पंचों के चेहरे उतर गये थे। किसी ने दबी हुई आवाज में कहा—कल-बल्ले वाली चीज का नखरा बहुत बड़ा होता है।

एक नौजवान ने आकर सूचना दी—राजपूत टोली के लोग हँसते-हँसते पागल हो रहे हैं। कहते हैं, कान पकड़कर पचलैट के सामने पाँच बार उठो-बैठो, तुरन्त जलने लगेगा।

पंचों ने सुनकर मन-ही-मन कहा--भगवान ने हँसने का मौका दिया है, हँसेंगे नहीं ? एक बूढ़े ने आकर खबर दी, रूदल साहु बनिया भारी बतगड आदमी है। कह रहा है, पचलट का पम्पू जरा होशियारी से देना !

गुलरी काकी की बेटी मुनरी के मुँह में बार-बार एक बात आकर मन में लौट जाती है। वह कैसे बोले ? वह जानती है कि गोधन पचलैट बालना जानता है। लेकिन, गोधन का हुक्का-पानी पंचायत से बंद है। मुनरी की माँ ने पंचायत में फरियाद की थी, कि गोधन रोज उसकी बेटी को देखकर 'सलम-म' वाला सलीमा का गीत गाता है—हम तुमसे मोहोब्बत करके सलम ! ो की निगाह पर गोधन बहुत दिन से चढ़ा हुआ था। दूसरे गाँव से आकर

कहता है गोधन, और अब तक होने से पंचों को पान-सुपारी खाने के लिए भी गुड़ नहीं दिया। परवाह ही नहीं करता है। बस, पंचों को मौका मिला। दस रुपया जुरमाना! न देने से हुक्का-पानी बंद।""आज तक गोधन पंचायत से बाहर है। उसके संग कहाँ जाए! मुनरी उसका नाम कैसे ले? और उधर जाति का पानी उतर रहा है।

मुनरी ने चालाकी से अपनी सहेली कनेली के कान में बात डाल दी — कनेली।""गिरो, चिप-ड-ड, चिन"" ! कनेली मुस्कराकर रह गई—गोधन तो बद है! मुनरी बोली— तू कह तो सरदार से!

--गोधन जानता है पचलंट बाजना? कनेली बोली।

--कौन, गोधना? जानता है बाजना? लेकिन""।

सरदार ने दीवान की ओर देखा और दीवान ने पचों की ओर। पचों ने एकमत होकर हुक्का-पानी बंद किया है। सलोना का गीत गाकर आँख का इशारा मारनेवाले गोधन से गाँव-भर के लोग नाराज थे। सरदार ने कहा—जाति की बंदिश क्या, जबकि जाति की इज्जत ही पानी में बही जा रही है! क्यों जी दीवान?

दीवान ने कहा—ठीक है।

पंचों ने भी एक स्वर से कहा—ठीक है। गोधन को खोल दिया जाय।

सरदार ने छड़ीदार को भेजा। छड़ीदार वापस आकर बोला—गोधन आने को राजी नहीं हो रहा है। कहता है, पचों की क्या परतीत? कोई कल-कब्जा बिगड़ गया तो मुझे ही दण्ड जुरमाना भरना पड़ेगा!

छड़ीदार ने रोनी सूरत बनाकर कहा—किसी तरह गोधन को राजी करवाइए, नहीं तो कल से गाँव में मुँह दिखाना मुश्किल हो जायगा।

गुलरी काकी बोली—जरा मैं देखूं कहके।

गुलरी काकी उठकर गोधन के झोंपड़े की ओर गई औ

मना लाई। सभी के चेहरे पर नई आशा की रोशनी चमकी। गोधन शुरचाप पंचलैट में तेल भरने लगा। सरदार की स्त्री ने पूजा की सामग्री के पास चक्कर काटती हुई बिल्ली को भगाया। कीर्तन मंडली का मूल-गैन मुरछल के बालों को सँवारने लगा। गोधन ने पूछा—इसपिरिट कहाँ है? बिना इसपिरिट के कैसे जलेगा?

""लो मजा! अब यह दूसरा बखेड़ा खड़ा हुआ! सभी ने मन ही मन सरदार, दीवान और पंचों की बुद्धि पर अविश्वास प्रकट किया। बिना बूझे-समझे काम करते हैं लोग। उपस्थित जन-समूह में फिर मायूसी छा गई। लेकिन, गोधन बड़ा होशियार लड़का है। बिना स्पिरिट के ही पंचलैट जलावेगा।""थोड़ा गरी का तेल ला दो। मुनरी दौड़कर गई और एक मलसी गरी का तेल ले आई। गोधन पंचलैट मे पम्प देने लगा।

पंचलैट की रेशमी थैली में धीरे-धीरे रोशनी आने लगी। गोधन कभी मुँह से फूँकता, कभी पंचलैट की चाबी घुमाता। थोड़ी देर के बाद पंचलैट से सनसनाहट की आवाज निकलने लगी और रोशनी बढ़ती गई। लोगों के दिल का मैल दूर हो गया। गोधन बड़ा काबिल लड़का है।

अन्त में पंचलाइट की रोशनी से सारी टोली जगमगा उठी तो कीर्तनिया लोगों ने एक स्वर में, महावीर स्वामी की जय-ध्वनि के साथ कीर्तन शुरू कर दिया। पंचलैट की रोशनी में सभी के मुस्कराते हुए चेहरे स्पष्ट हो गए। गोधन ने सबका दिल जीत लिया।

सरदार ने गोधन को बहुत प्यार से पास बुलाकर कहा—तुमने जाति की इज्जत रखी है। तुम्हारा सात खून माफ। खूब गाओ सलीमा का गाना।

गुलरी काकी बोली—आज रात में मेरे घर से खाना गोधन।

कीर्तनिया लोगों ने एक कीर्तन समाप्त कर जयध्वनि की—जय हो। पंचलैट के प्रकाश में पेड़-पौधों का पत्ता-पत्ता पुलकित हो रहा था।

लघु कहानी

भिखारी का ज्ञान

(लेखक: गंगाप्रसाद पाण्डेय)

[कहानी को अंग्रेजी में 'शॉर्ट-स्टोरी' कहा जाता है। लघु कहानी 'शॉर्ट-स्टोरी' से भी छोटी रचना है। लघु-कहानी का आकार जितना छोटा होता है उसकी रचना में सफलता पाना उतना ही कठिन है। लघु कहानी में लेखक अपनी रचना-सामर्थ्य को रचना के उद्देश्य पर केन्द्रित करता है। लघु कहानी में चरित्र की व्याख्या या विश्लेषण नहीं होता, किसी मानवीय सत्य या सामाजिक स्थिति की संकेतात्मक व्यंजना होती है। व्यंजनात्मकता ही लघु कहानी की आत्मा है।

प्रस्तुत लघु-कहानी 'भिखारी का ज्ञान' में यह व्यंजनात्मकता खूब दिखलाई देती है। इस लघु-कहानी में भाग्यवादी दृष्टिकोण पर बड़ा सटीक व्यंग्य प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि रचना का आकार छोटा है किन्तु लेखक ने अपनी बात कहने में पूरी सफलता प्राप्त की है।]

"जय हो सेठजी की! एक रोटी का सवाल है। राजा, बहुत भूखा है।" भिखारी ने

बहिन सुभद्रा

(लेखक महादेवी वर्मा)

['रेखाचित्र' कहानी-साहित्य की एक नवीन विधा है। यह शब्द मूलत. चित्रकला के क्षेत्र का शब्द है। अच्छे कलाकार कुछ रेखाओं के प्रयो मात्र से ही सुन्दर चित्र की रचना कर देते हैं। चित्रकला के क्षेत्र में इ 'पेंसिल स्केच' या रेखाचित्र कहा जाता है। साहित्य में रेखाचित्र का अ है थोड़े से शब्दों द्वारा किसी पात्र के चरित्र का प्रभावशाली वर्णन। 'रेख चित्र' चरित्र-प्रधान रचना है, किन्तु चरित्र प्रधान कहानी के समान रेखाचि मे चरित्र का विकास नहीं होता है। रेखाचित्र में चरित्र का क्रमशः उद्घा न होकर प्रस्तुतीकरण होता है।

प्रस्तुत रचना में श्रीमती महादेवी वर्मा ने प्रसिद्ध कवयित्री सु कुमारी चौहान का रेखाचित्र प्रस्तुत किया है। सुभद्रा कुमारी चौहान ह के विरोध में जितनी कठोर थीं, हृदय से उतनी ही कोमल थीं लेखिका ने कुशलता पूर्वक दिखलाया है। स्वाधीनता आन्दोलन मे उन्हें किस प्रकार झेलने पड़े यह भी इस रचना से भलीभाँति ज्ञात होता है।]

हमारे शैशवकालीन अतीत और प्रत्यक्ष वर्तमान के बीच मे प्रवाह का पाट ज्यों-ज्यों चौड़ा होता जाता है त्यों-त्यों हमारी स्मृति मे जाने ही एक परिवर्तन लक्षित होने लगता है। शैशव की चित्रशाला चित्रों से हमारा रागात्मक सम्बन्ध गहरा होता है, उनकी रेखाएँ औ इतने स्पष्ट और चटकीले होने चलते हैं कि हम वार्धक्य की धुँधली औ भी उन्हें प्रत्यक्ष देखते रह सकते हैं। पर जिनमें ऐसा फीके होते-होते इस प्रकार स्मृति से धुल पर भी उनका स्मरण कठिन हो जा

मेरे अतीत की चित्रशाला मे अंकित सुभद्रा मे मेरे सख्य का चित्र पहली कोटि मे ही रखा जा सकता है, क्योंकि इतने वर्षों के उपरान्त भी उसकी सब रेखाएँ अपनी अम्लानता मे स्पष्ट हैं।

एक सातवीं कक्षा की विद्यार्थिनी, एक पाँचवीं कक्षा की विद्यार्थिनी से प्रश्न करती है, 'क्या तुम कविता लिखती हो?' दूसरी ने सिर हिला कर ऐसी अस्वीकृति दी जिसमे हाँ और नहीं तरल होकर एक हो गये थे। प्रश्न करने वाली ने इस स्वीकृति-अस्वीकृति की सन्धि से खीझ कर कहा, 'तुम्हारी क्लास की लड़कियाँ तो कहती है कि तुम गणित की कापी तक मे कविता लिखती हो। दिखाओ अपनी कापी' और उत्तर की प्रतीक्षा मे समय नष्ट न कर वह कविता लिखने की अपराधिनी को हाथ पकड़कर खींचती हुई उसके कमरे मे डेस्क के पास ले गई। नित्य-व्यवहार मे आने वाली गणित की कापी को छिपाना सम्भव नहीं था, अतः उसके साथ अंकों के बीच मे अनधिकार घुस कर बैठी हुई तुकबन्दियाँ अनायास पकड़ मे आ गई। इतना दण्ड ही पर्याप्त था। पर इससे सन्तुष्ट न होकर अपराध की अन्वेषिका ने एक हाथ मे वह चित्र-विचित्र कापी थामी और दूसरे से अभियुक्त की उंगलियाँ कस कर पकड़ीं और वह हर कमरे मे जा-जाकर इस अपराध की सार्वजनिक घोषणा करने लगी।

उस युग मे कविता-रचना अपराधों की सूची मे थी। कोई तुक जोड़ता है, यह सुनकर ही सुनने वालों के मुख की रेखाएँ इस प्रकार वक्र-कुंचित हो जाती थीं मानों उन्हें कोई कटु-तिक्त पेय पीना पड़ा हो।

मैंने होंठ भींच कर न रोने का जो निश्चय किया वह न टूटा तो न टूटा। अन्त में मुझे शक्ति परीक्षा में उत्तीर्ण देख सुभद्राजी ने उत्फुल्ल-भाव से कहा, 'अच्छा तो लिखती हो। भला सवाल हल करने मे दो तीन जोड़ लेना कोई बड़ा काम है।' मेरी चोट अभी दुख रही थी, परन्तु सहानुभूति और आत्मीय-भाव का परिचय पाकर आँखें सजल हो आईं। 'तुमने सबसे क्यों बताया?' का सहमा उत्तर मिला 'हमें भी तो यह सहना पड़ता है। अच्छा हुआ अब दो साथी हो गये।'

बहिन सुभद्रा

(लेखक महादेवी वर्मा)

['रेखाचित्र' कहानी-साहित्य की एक नवीन विधा है। यह श
मूलतः चित्रकला के क्षेत्र का शब्द है। अच्छे कलाकार कुछ रेखाओं के प्रयो
मात्र से ही सुन्दर चित्र की रचना कर देते हैं। चित्रकला के क्षेत्र में इ
'पेंसिल स्केच' या रेखाचित्र कहा जाता है। साहित्य में रेखाचित्र का अ
है थोड़े से शब्दों द्वारा किसी पात्र के चरित्र का प्रभावशाली वर्णन। 'रेख
चित्र' चरित्र प्रधान रचना है, किन्तु चरित्र प्रधान कहानी के समान रेखाचि
मे चरित्र का विकास नहीं होता है। रेखाचित्र में चरित्र का क्रमश: उद्घाट
न होकर प्रस्तुतीकरण होता है।

प्रस्तुत रचना मे श्रीमती महादेवी वर्मा ने प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्
कुमारी चौहान का रेखाचित्र प्रस्तुत किया है। सुभद्रा कुमारी चौहान रुढ़ि
के विरोध मे जितनी कठोर थीं, हृदय से उतनी ही कोमल थीं लेखिका ने य
कुशलता पूर्वक दिखलाया है। स्वाधीनता आन्दोलन में उन्हें किस प्रकार कष्
झेलने पड़े यह भी इस रचना से भलीभाँति ज्ञात होता है।]

हमारे शैशवकालीन अतीत और प्रत्यक्ष वर्तमान के बीच मे समय-प्रवाह का पाट ज्यो-ज्यों चौड़ा होता जाता है त्यो-त्यो हमारी स्मृति मे अन-जाने ही एक परिवर्तन लक्षित होने लगता है। शैशव की चित्रशाला के जिन चित्रों से हमारा रागात्मक सम्बन्ध गहरा होता है, उनकी रेखाएँ और रंग इतने स्पष्ट और चटकीले होते चलते हैं कि हम वार्धक्य की धुँधली आँखों से भी उन्हे प्रत्यक्ष देखते रह सकते है। पर जिनसे ऐसा सम्बन्ध नहीं होता वे फीके होते-होते इस प्रकार स्मृति से धुल जाते हैं कि दूसरो के स्मरण दिलाने पर भी उनका स्मरण कठिन हो जाता है।

भरी बाहें फैलाए हुए अपने घर पर दृष्टि डाली हो और फिर बाहर के अन्धकार, आंधी और तूफान को तोला हो और तब घर की सुरक्षित सीमा पार कर, उसके सुन्दर मधुर आह्वान की ओर से पीठ फेर कर अन्धेरे रास्ते पर कांटो से उलझती चल पडी हो। उन्होंने हँसते-हँसते ही बताया था कि जेल जाते समय उन्हें इतनी अधिक फूलमालाएं मिल जाती थी कि वे उन्ही का तकिया बना लेती थीं और लेटकर पुष्पशैय्या के सुख का अनुभव करती थी।

घर और कारागार के बीच मे जीवन का जो क्रम विवाह के साथ आरम्भ हुआ था वह अन्त तक चलता ही रहा। छोटे बच्चो को जेल के भीतर और बड़ो को बाहर रख कर वे अपने मन को कैसे संयत रख पाती थी, यह सोचकर विस्मय होता है। कारागार मे जो सम्पन्न परिवारो की सत्याग्रही माताएं थी उनके बच्चो के लिए बाहर से न जाने कितना मेवा-मिष्टान्न आता रहता था। सुभद्रा जी की आर्थिक परिस्थितियों मे जेल-जीवन का ए और सी क्लास समान ही था। एक बार जब भूख से रोती बालिका को बहलाने के लिए कुछ नहीं मिल सका तब उन्होने अरहर दलने वाली महिला-कैदियो से थोड़ी सी अरहर की दाल ली और उसे तवे पर भूनकर बालिका को खिलाया। घर आने पर भी उनकी दशा द्रोणाचार्य जैसी हो जाती थी, जिन्हें दूध के लिए मचलते हुए बालक अश्वत्थामा को चावल के घोल से सफेद पानी देकर बहलाना पड़ा था। पर इन परीक्षाओ से उनका मन न कभी हारा और न उन्होने परिस्थितियो को अनुकूल बनाने के लिए कोई समझौता स्वीकार किया।

नारी के हृदय में जो गम्भीर ममता-सजल वीर-भाव उत्पन्न होता है, वह पुरुष के उग्र-शौर्य से अधिक उदात्त और दिव्य रहता है। पुरुष अपने व्यक्तिगत या समूहगत रागद्वेष के लिए भी वीर-धर्म अपना सकता है और अहंकार की तृप्ति मात्र के लिए भी। पर नारी अपने सृजन की बाधाएं दूर करने के लिए या अपनी कल्याणी सृष्टि की रक्षा के लिए रुद्र बनती है। अतः उसकी वीरता के समकक्ष रखने योग्य प्रेरणाएं संसार के कोष में कम हैं। ...नि का दिव्य, रक्षक, उद्धारक रूप होने के कारण ही भीमाकृति चंडी,

करुणा ममता भी है जो हिंसात्मक पाशविक शक्तियों को चरणों के
दबाकर अपनी सृष्टि के मंगल की साधना करती है।

सुभद्रा जी में जो महिमामयी माँ थी उसकी वीरता का उत्स
वात्सल्य ही कहा जा सकता है। न उनका जीवन किसी क्षणिक उत्तेज
संचालित हुआ न उनकी ओज भरी कविता वीर रस की पिसी-पिटी लीक
चली। उनके जीवन में जो एक निरन्तर निखरता हुआ कर्म का तारतम
वह ऐसी अन्तस्थापिनी निष्ठा से जुड़ा हुआ है जो क्षणिक उत्तेजना की
नहीं मानी जा सकती। इसी से जहाँ दूसरों को यात्रा का अन्त दिखाई
वहीं उन्हें नई मंजिल का बोध हुआ।

थक कर बैठने वाला अपने न चलने की सफाई खोजने-खोजने लग
लेने की कल्पना कर सकता है, पर चलने वाले को इसका अवकाश कहाँ

जीवन के प्रति ममता भरा विश्वास ही उनके काव्य का प्राण है

वे राजनीतिक जीवन में ही विद्रोहिणी नहीं रहीं, अपने पारिव
जीवन में भी उन्होंने अपने विद्रोह को सफलतापूर्वक उतार कर उसे सृज
रूप दिया था।

सुभद्राजी के अध्ययन का क्रम असमय ही भंग हो जाने के कारण
विश्वविद्यालय की शिक्षा तो नहीं मिल सकी, पर अनुभव की पुस्तक से उ
जो सीखा उसे उनकी प्रतिभा ने सर्वथा निजी विशेषता दे दी है।

भाषा, भाव, छन्द की दृष्टि से नये, "झांसी की रानी" जैसे वीर
तथा सरल, स्पष्टता में मधुर, प्रगीत मुक्तक, यथार्थवादिनी मार्मिक कहा
आदि उनकी मौलिक प्रतिभा के ही सृजन हैं।

ऐसी प्रतिभा व्यावहारिक जीवन को अछूता छोड़ देती तो आश्चर्य
बात होती।

पत्नी की अनुगामिनी, अर्धांगिनी आदि विशेषताओं को अस्वीकार

उन्होंने भाई लक्ष्मणसिंह जी की पत्नी के रूप में ऐसा अभिलेख लिख दिया जिसको बुद्धि और शक्ति पर निर्भर रह कर अनुगमन किया जा सके।

देश की जिस स्वतन्त्रता के लिए उन्होंने अपने जीवन के वासन्ती सपने अंगारों पर रख दिये थे, उसकी प्राप्ति के उपरान्त भी जब उन्हें सब ओर अभाव और पीड़ा दिखाई दी तब उन्होंने अपने संघर्षकालीन साथियों से भी विद्रोह किया। उनकी उग्रता का अन्तिम परिचय तो विश्ववन्द्य बापू की अस्थिविसर्जन के दिन प्राप्त हुआ। वे कई सौ हरिजन महिलाओं के जुलूस के साथ-साथ सात मील पैदल चलकर नर्मदा किनारे पहुँचीं। अन्य सम्पन्न परिवारों की सदस्याएँ मोटरों पर ही जा सकीं। जब अस्थिप्रवाह के उपरान्त संयोजित सभा के घेरे में इन पैदल आने वालों को स्थान नहीं दिया गया तब सुभद्रा जी का क्षुब्ध हो जाना स्वाभाविक ही था। उनका क्षात्रधर्म तो किसी भी प्रकार के अन्याय के प्रति क्षमाशील हो नहीं सकता था। जब उन हरिजनों को उनका प्राप्य दिया सकीं तभी वे स्वयं सभा में सम्मिलित हुईं।

ऐसे भी अवसर आ जाते थे जब वे किसी कवि-सम्मेलन में आते-जाते प्रयाग उतर नहीं पाती थीं और मुझे स्टेशन जाकर ही उनसे मिलना पड़ता था। ऐसी कुछ क्षणों की भेंट में भी एक दृश्य की अनेक आवृतियाँ होती ही रहती थीं। वे अपने थैले से दो चमकीली चूड़ियाँ निकाल कर हँसती हुई पूछतीं "पसन्द हैं? मैंने दो तुम्हारे लिए, दो अपने लिए खरीदी थीं। तुम पहनने में तोड़ डालोगी लाओ अपना हाथ, मैं पहना देती हूँ।" पहन लेने पर वे बच्चों के समान प्रसन्न हो उठतीं।

हम दोनों जब साथ रहती थीं तब बात एक मिनिट और हँसी पाँच मिनिट का अनुपात रहता था। इसी से प्रायः किसी सभा समिति में जाने के पहले न हँसने का निश्चय करना पड़ता था। एक दूसरे की ओर बिना देखे गम्भीर भाव से बैठे रहने की प्रतिज्ञा करके भी वहाँ पहुँचते ही एक न एक दृश्य या शब्द सुभद्राजी के कुतूहली मन को आकर्षित कर लेता और मुझे

दिखाने के लिये वे चिकोटी तक काटने से नहीं चूकती। तब हमारी घो
सदस्यता की जो स्थिति हो जाती थी उसका अनुमान सहज है।

अनेक कवि-सम्मेलनों में हमने साथ-साथ भाग लिया था। पर जि
दिन मैंने अपने न जाने का निश्चय और उसका औचित्य उन्हें बता दिया उ
दिन से अन्त तक कभी उन्होंने मेरे निश्चय के विरुद्ध कोई आग्रह नहीं किया
आर्थिक स्थितियाँ उन्हें ऐसे निमंत्रण स्वीकार करने के लिए विवश कर देत
थीं, परन्तु मेरा प्रश्न उठते ही वे कह देती थी, 'मैं तो विवशता से जाती हूँ, प
महादेवी नहीं जायगी, नहीं जायगी।'

साहित्य जगत में आज जिस सीमा तक व्यक्तिगत स्पर्द्धा, ईर्ष्या-
है, उस सीमा तक तब नहीं था, यह सत्य है। पर एक दूसरे के साहित्य, चरित्र
स्वभाव सम्बन्धी निन्दा-पुराण तो सब युगों में नानी की कथा के समान लोक-
प्रियता पा लेता है। अपने किसी भी परिचित-अपरिचित साहित्य-साथी की
त्रुटियों के प्रति सहिष्णु रहना और उसके गुणों के मूल्यांकन में उदारता से
काम लेना सुभद्राजी की निजी विशेषता थी। अपने को बड़ा बनाने के लिए
दूसरों को छोटा प्रमाणित करने की दुर्बलता उनमें असम्भव था।

बसन्त पंचमी को पुष्पाभरणा, आलोकवसना धरती की छवि आँखों
में भर कर सुभद्राजी ने विदा ली। उनके लिए किसी अन्य विदा की कल्पना
ही कठिन थी।

एक बार बात करते-करते मृत्यु की चर्चा चल पड़ी थी। मैंने कहा,
'मुझे तो उस लहर की सी मृत्यु चाहिये जो तट पर दूर तक आकर चुपचाप
समुद्र में लौट कर समुद्र बन जाती है' सुभद्रा बोलीं, "मेरे मन में तो मरने के
बाद भी धरती छोड़ने की कल्पना नहीं है। मैं चाहती हूँ मेरी एक समाधि हो
जिसके चारों ओर नित्य मेला लगता रहे। बच्चे खेलते रहें, स्त्रियाँ गाती रहें
और कोलाहल होता रहे। अब बताओ तुम्हारी नामधाम रहित लहर से यह
[illegible] अच्छा है या नहीं?"

उस दिन जब उनके पार्थिव अवशेष को त्रिवेणी ने अपने श्यामल उज्ज्वल अंचल में समेट लिया तब नीराभ-स्फटिक पर श्वेत चन्दन से बने उस चित्र की रेखाओं में बहुत वर्षों पहले देखा एक किशोर मुख मुस्कराता जान पड़ा।

"यहीं कहीं पर बिखर गई वह छिन्न विजय माला सी।"

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. श्रीमती सुभद्रा कुमारी के चरित्र की प्रमुख विशेषताओं का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

२. सुभद्राकुमारी चौहान और महादेवी वर्मा के परस्पर प्रेम का वर्णन प्रस्तुत रेखा चित्र के आधार पर कीजिये।

राखी

(ले० हरिकृष्ण प्रेमी)

[गद्य-साहित्य के आधुनिक रूपों में एकांकी अपेक्षाकृत नवीन ह
है। एकांकी का आरम्भ २० वीं शताब्दी के शुरू में इंगलैण्ड में हुआ
कहानी के समान एकांकी भी छोटी रचना है इसलिए जैसे कहानी
लोकप्रियता से उपन्यास को पीछे छोड़ दिया है, उसी तरह एकांकी
हजारों वर्ष पुराने नाटक को पीछे छोड़ दिया है।

प्रस्तुत एकांकी भारतीय इतिहास के एक उज्ज्वल पृष्ठ को प्र
करता है। यह सर्वविदित ऐतिहासिक तथ्य है कि चित्तौड़ की मह
कर्मवती की राखी स्वीकार करके हुमायूँ ने गुजरात के मुसलमान बा
के विरुद्ध चित्तौड़ की सहायता की थी और बहादुरशाह को पराजित
था। प्रस्तुत रचना मे लेखक ने हुमायूँ के चरित्र को बहुत उद
में प्रस्तुत किया है। साम्प्रदायिक अशान्ति के इन दिनों में प्रस्तुत
का विशेष,महत्त्व है।]

पात्र

कर्मवती .... स्वर्गीय महाराणा सांगा की
उदयसिंह की माँ

जवाहरबाई .... स्वर्गीय महाराणा सांगा की
विक्रमादित्य की माँ

बाघसिंह .... महाराणा विक्रमादित्य के
प्रतापगढ़ के राजा

हुमायूँ	....	दिल्ली का बादशाह
तातारखाँ हिंदूबेग	....	हुमायूँ के सेनापति
विक्रमसिंह	....	मेवाड़ के राणा

पहला दृश्य

[चित्तौड़-गढ़ के भीतरी भाग में कर्मवती, जवाहरबाई तथा अन्य क्षत्राणियाँ थालियों में राखियाँ सजाए खड़ी हैं। वीर क्षत्रिय राखी बँधवाने को प्रस्तुत हैं।]

कर्मवती—मेवाड़ में ऐसी रंगीन श्रावणी कभी न आई होगी। भाइयो, क्षत्राणियों की राखियाँ सस्ती नहीं होतीं, ब्राह्मणों की तरह हम पैसे लेकर राखी नहीं बाँधतीं ! हमारे तारों का प्रतिदान सर्वस्व-बलिदान है। जिन्हें प्राण चढ़ाने का शौक हो, वे ही ये राखियाँ स्वीकार करें।

एक क्षत्रिय—मेवाड़ के क्षत्रियों को यह बात नए सिरे से न समझानी होगी। माँ, हम लोग सदियों से हँसते-हँसते प्राण देते आए हैं। हमारी इस अजस्र-शक्ति का स्रोत और कहाँ है ? बहनों की राखियों के ये धागे ही तो हमें बल देते आये हैं।

(बहनें टीका करके भाइयों को राखी पहनाती और तलवारें देती हैं)

कर्मवती—मेवाड़ के सपूतो, मेवाड़ का अभिमान तुम्हीं हो। तुम्हारी कीर्ति अमर हो ! जाओ, रण-भूमि तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।

(क्षत्रियों का अभिवादन करके प्रस्थान)

कर्मवती—बहनो, तुम शीघ्र जाकर घर-घर में वीर-व्रत की तैयारी करो !

(बहनों का प्रस्थान)

कर्मवती—बाघसिंह जी ! आप ठहरो ! जवाहरबाई तुम भी ठहरो !

(बाघसिंह और जवाहरबाई रुक जाती हैं)

कर्मवती—हाँ, बाघसिंह जी ! युद्ध का क्या हाल है ?

बाघसिंह—राजपूत वीरता से लड़ रहे हैं। किन्तु एक तो
संख्या बहुत कम है, दूसरे शत्रुओं का तोपखाना आग उगल रहा है
मुकाबिला तलवारों से तो हो नहीं सकता! हमें मरना है, हम हँ
मरेंगे और बहुतों को मार कर मरेंगे, पर दुःख है तो यही कि म
मेवाड़ के मान की रक्षा न कर पायेंगे!

कर्मवती—बड़ा कठिन प्रसंग है। इस समय मेरे स्वामी
उनके रहते मेवाड़ की ओर आँख उठाने का किसमें साहस था? उन
से मेवाड़ के बाहर भी दूर-दूर तक अत्याचारियों के प्राण काँप
मेवाड़ की सीमा में पैर रखने का तो साहस ही किसे हो सकता था?
जो, हमने भारत के वैभवरत्न को आग में अपने ही हाथों अपना
स्वाहा कर दिया।

बाघसिंह—अब पश्चाताप करने से क्या होता है, देवि!
हमें मार्ग बताइए। ऐसे प्रसंगों पर विवेक अनुशासन के चरणों
जाना चाहता है।

कर्मवती—मुझे एक उपाय सूझा है।

बाघसिंह—क्या?

कर्मवती—मैं हुमायूँ को राखी भेजती हूँ।

जवाहरबाई—हुमायूँ को, एक मुसलमान को भाई बनाओगी?

कर्मवती—चौंकती क्यों हो, जवाहरबाई! मुसलमान भी इ
हैं। उनके भी बहनें होती हैं। सोचो तो बहन, क्या वे मनुष्य नहीं
क्या उनके हृदय नहीं है? वे ईश्वर को खुदा कहते हैं, मन्दिर में न ज
मस्जिद में जाते हैं, क्या इसीलिए हमें उनसे घृणा करनी चाहिए?

बाघसिंह किन्तु और भी तो बाधाएँ हैं। क्या हुमायूँ पु
बैर भूला होगा? सीकरी के युद्ध के जख्मों के निशान क्या आसानी
मिट सकेंगे?

कर्मवती—हमारी राखी वह शीतल प्रलेप है, जो सारे घाव

देता है, वह वरदान है जो सारे वैर-भावों को जलाकर भस्म कर देता है। राखी पाने के बाद भी क्या कोई वैर-विरोध याद रख सकता है।

जवाहर—मुसलमान भारत के शत्रु हैं।

कर्मवती—ऐसा न कहो। उन्हें भी भारत में जीना-मरना है। हमारी तरह भारत उनकी भी जन्म भूमि हो चुकी है। अब उन्हें काफिले में लाद कर अरब नहीं भेजा जा सकता। उन्हें यहीं रहना पड़ेगा और हमें उन्हें रखना पड़ेगा। वे हमें भाई समझें और हम उन्हें, यही स्वाभाविक है, यही उचित है। इस विकट अवसर पर मेवाड़ की रक्षा का और उपाय ही क्या है? बाघसिंह जी, आप ही कुछ बताइये। आपकी क्या सम्मति है?

बाघसिंह—हम तो आज्ञा-पालन करना जानते हैं, सम्मति देना नहीं!

कर्मवती—अच्छा तो फिर यही हो। भ्रातृत्व और मनुष्यत्व पर विश्वास करके हुमायूँ की परीक्षा की जाये। लो, यह राखी और यह पत्र आज ही दूत के हाथ बादशाह हुमायूँ के पास भेजिए।

(राखी और पत्र देती है)

जवाहर—अच्छी बात है! हम भी देखेंगी कि कौन कितने पानी में है। इस बहाने एक मुसलमान की मनुष्यता की परीक्षा हो जायगी और यह भी प्रकट हो जायगा कि एक राजपूतनी की राखी में कितनी ताकत है?

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

[वि र मे ... ्मायूँ का फौजी डेरा। अपने खास तम्बू
...और तातारखाँ बैठे हैं]

... हार कर, बंगाल की तरफ भाग तो गया,
...ला नाग चुप न बैठ सकेगा।

... ...लेर और बड़ा बहादुर
की ...

तातारखाँ—कहाँ आसमान का चाँद और कहाँ झोंपड़ी का चिराग ? कहाँ बादशाह बाबरशाह, और कहाँ लुटेरा शेरखाँ !

हुमायूँ—नाकामयाब सिपाही लुटेरा और बागी ही कहलाता है, मगर ज्योंही कामयाबी उसके सर पर ताज पहनाती है, त्योंही वह लुटेरा—वह बागी—बादशाह हो जाता है।

तातारखाँ—शेरखाँ तो आपका दुश्मन है, आप उसकी तारीफ....

हुमायूँ—दुश्मनी आँखों की रोशनी नहीं छीन लेती। शेरखाँ की बहादुरी इन लड़ाइयों में साफ रोशन हो चुकी है। ऐसे दिलेर दुश्मन से लोहा लेना भी फख्र की बात है।

हिंदूबेग—यह जहरीला साँप इस वक्त घेरे मे आ गया है, इस मौके पर अगर इसकी थूथरी न कुचल दी गई तो यह फिर काबू में न आयेगा।

हुमायूँ—मैं भी यही सोचता हूँ। पर अभी तक भाइयों ने कुमक नहीं भेजी। मैं उसी की इन्तजार मे हूँ।

तातारखाँ—मुझे तो उनके रंग-ढंग देख कर अन्देशा होता है कि कुछ दाल में काला है।

[एक पहरेदार का प्रवेश]

पहरेदार—(अभिवादन करके) जहाँपनाह !

हुमायूँ—क्या है ?

पहरेदार—खिदमत मे मेवाड़ से एक दूत आया है !

हुमायूँ—मेवाड़ से ? अच्छा यहीं भेज दो।

(पहरेदार का प्रस्थान)

हुमायूँ—मेवाड़ से दूत ! मेवाड़ लफ्ज मे ही कुछ जादू है। और सीकरी की लड़ाई मे मैं भी अब्बाजान के साथ था। राजपूतों की फौज कैसा खौफ लाती थी ! राणा सांगा ! उन्हें तो खुदा ने बनाया था ! उनकी तिरछी नजर कयामत का पैग़ाम थी। मेवाड़ ... ने चढ़ाई कर रखी है न !

(दूत का प्रवेश)

हुमायूँ—आओ मेवाड़ के बहादुर !

दूत—(अभिवादन करके) स्वर्गीय महाराणा संग्रामसिंह जी की महारानी कर्मवती जी ने आपको यह सौगात भेजी है।

हुमायूँ—(हाथ बढ़ा कर) मेरी ऐसी किस्मत ! हिंदूबेग ! तुम जानते हो मैं मेवाड़ की बहुत इज्जत करता हूँ, और हर एक बहादुर आदमी को करनी भी चाहिए ! वहाँ की खाक भी सर पर लगाने की चीज है। वहाँ के ज़र्रे-ज़र्रे में बहिश्त है !

तातारखाँ—दुश्मन की तारीफ करने में, जहाँपनाह से बढ़कर....

हुमायूँ—दुश्मन ! ह ह ह ! दुश्मन आँखों पर से तअस्सुब का चश्मा हटा कर देखो। जिन्हें हम दुश्मन समझते हैं; वे सब हमारे भाई हैं। हम एक ही खुदा के बेटे हैं, तातार ! हाँ देखूँ तो इसमें क्या लिखा है ?

(हुमायूँ पत्र पढ़ते-पढ़ते विचार-मग्न हो जाता है)

हिंदूबेग—क्या सपना देखने लगे, जहाँपनाह ! महारानी कर्मवती ने क्या जादू का पिटारा भेजा है।

हुमायूँ—सचमुच हिंदूबेग, उन्होंने जादू का पिटारा भेजा है। मेरे सूने आसमान में उन्होंने मुहब्बत का चाँद चमकाया है। उन्होंने मुझे राखी भेजी है, मुझे अपना भाई बनाया है। (दूत से) बहन कर्मवती से कहना, हुमायूँ तुम्हारी माँ के पेट से पैदा न हुआ तो क्या, वह तुम्हारे सगे भाई से भी बढ़ कर है। कह देना—मेवाड़ की इज्जत, मेरी इज्जत है। जाओ !

(दूत का प्रस्थान)

तातारखाँ—आपके खानदान के जानी दुश्मन की औरत ने....।

हिंदूबेग—उसी औरत ने जिसके खाविंद ने कसम खाई थी कि मुगलों को हिंदुस्तान के बाहर खदेड़े बगैर चित्तौड़ में कदम न रखूँगा !

हुमायूँ—अफ़सोस कि तुम इस रानी की कोमल भा
छोटे-छोटे हो जाने वाली दुश्मन को भी मुहब्बत की जंजीरों में
यह मेरी खुशकिस्मती है कि मेवाड़ की बहादुर महारानी ने मुझे
है, और बहादुरशाह से मेवाड़ की हिफ़ाज़त करने के लिए मेरी

तातारखाँ—तो क्या जहाँपनाह ने उनकी इल्तजा मन्जू

हुमायूँ—यह इल्तजा नहीं हुक्म है। रानी का आने
क्या सोच-विचार किया जा सकता है? यह तो प्यार में डूब
है। हिन्दुस्तान की तवारीख़ कह रही है कि रानी के धागों ने
लियाँ कटाई हैं। मैं दुनियाँ को बता देना चाहता हूँ कि हिन्दुओं
मुसलमानों के लिए भी उतने ही प्यारे हैं, उतने ही पाक हैं।

तातारखाँ—एक मुसलमान के ऊपर एक हिन्दू को तरजी

हुमायूँ—तुम भूलते हो! तुम सब एक ही परवरदिगार
हो। हिन्दुओं के अवतारों ने और तुम्हारे पैगंबर ने एक ही रास्
है।

तातारखाँ—वे हमारे पैगंबर को नहीं मानते।

हुमायूँ—और तुम उनके पैगम्बर को मानते हो?
शरीफ़ में तुम्हें हुक्म दिया गया है कि तुम दूसरों के पैगंबरों
मानो; उनका यकीन करो। सचाई जहाँ भी रोशन हुई है, जिस कि
रोशन हुई है, सचाई है।[1] खुदा की साफ़ हिदायत होते हुए भी
के धर्म और अवतारों की इज्ज़त न करते हुए उनसे लड़ते हो।
वक्त सचाई पर हैं और बहादुरशाह गुमराह है। सच्चे मुसलमा
सचाई का साथ देना है, फिर चाहे उसे मुसलमान के ही खिलाफ़
पड़े। बस आज ही मेवाड की तरफ कूच करना होगा।

हिन्दूबेग—मुझे हिन्दू-मुसलमान का ख्याल नहीं। पर मैं
कि शेरखाँ को खुला छोड़कर मेवाड़ की तरफ लौट जाना खतरे से

१—सूरा २, आयत ८८।

हुमायूँ—अब सोचने का वक्त नहीं है ! बहन का रिश्ता दुनियाँ के सारे सुखों, दौलतो, ताकतो और सल्तनतो से बढ़कर है। मैं इस रिश्ते की इज्जत रखूँगा। बहन कर्मवती ! तुम्हारी राखी मुझे वही ताकत दे, जो वह राजपूतो को देती आई है। तातारखाँ ! हिंदूबेग ! जल्दी फौज तैयार करो।

(राखी हाथ मे बाँधते-बाँधते जाता है। सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

(स्थान—चंबल के किनारे हुमायूँ का डेरा)

[हुमायूँ, तातारखाँ और हिंदूबेग बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं]

तातारखाँ—बादशाह सलामत ! लोधी खानदान अभी तक सर उठाए हुए है। शेरखाँ ताकत जमा करता जा रहा है। आपके भाइयो ने आप से किनाराकशी कर ली है। देहली की सल्तनत कायम रखने का·······

हुमायूँ—तातारखाँ ! देहली की सल्तनत तो चीज ही क्या है, सारी दुनिया की सल्तनत से भी बढ कर एक सल्तनत है वह है इनसानियत की सल्तनत, मुहब्बत की सल्तनत ! सिकंदरशाह, जिन्होने यूनान से हिन्दुस्तान तक अपनी सल्तनत कायम की थी, आज कहाँ है ? कहाँ है उनकी सल्तनत ? कहाँ है उनकी जिंदगी भर की कमाई ? लेकिन जिन्होने दिलों को जीता था—वे आज तक जिन्दा हैं, वे आज तक हुकूमत करते हैं। उनकी सल्तनत आज तक दुनिया के दिल पर इनसानियत की ताकत के सहारे टिकी हुई है। हजरत मोहम्मद जिन्होने इनसान को सारी दुनिया से मुहब्बत करने की तालीम दी, आज दिलों के आसमान मे, सितारे की तरह चमक रहे हैं। अभी तक वह गोया हमें इशारे से जता रहे हैं कि "धन-दौलत का खयाल छोड़ और इनसानियत की सल्तनत कायम कर !"

तातारखाँ—आपकी तरह ऊँची सतह से मैं नहीं सोच पाता। मैं तो ‌ ही देखता हूँ और साफ देखता हूँ कि बहादुरशाह मुसलमान है, और ‌ के महाराणा काफिर ! मेरे सामने दो मे से एक को चुनने का सवाल

आये, तो मैं बहादुरशाह ही को चुनूँ। मेरा जी नहीं चाहता कि आपका साथ दूँ। मैंने जो मुनासिब समझा, खिदमत में अदब के साथ अर्ज कर चुका। आगे जो जहाँपनाह की मर्जी।

(एक सिपाही का प्रवेश)

हुमायूँ—क्यों क्या खबर लाए हो ?

सिपाही—जहाँपनाह ! शेरखाँ ने फिर फौज इकट्ठी कर ली है, और बिहार और बंगाल पर कब्जा कर लिया है।

तातारखाँ—सोचिए, बादशाह सलामत, अब भी मौका है ! सोच कहिए किस तरफ कूच करना है ? बंगाल की तरफ या चित्तौड़ की तरफ आप सल्तनत की हिफाजत करना चाहते हैं, या एक हिंदू बहन के इशारे कुर्बान होना ?

हुमायूँ—तातारखाँ, मैंने खूब सोच लिया है। मैं राखी का चुकाने जाऊँगा। सल्तनत जाना चाहती हो, तो जाये। खुदा को ने रास्ते पर चलने वाले को सजा देनी होगी तो देगा। मुझे उसकी फिक्र फिक्र है तो इतनी कि मैं शायद वक्त पर न पहुँच सकूँगा। तातार हिंदूबेग ! मैं एक लमहा भी नहीं खोना चाहता। जाओ इसी वक्त डंका बजाओ। हाँ, एक बात और; महाराणा का पता लगाने और उन्हें पास ले आने को भी कुछ आदमी भेजने होंगे।

(हिंदूबेग और तातारखाँ का

हुमायूँ—बहन कर्मवती ! अपने खाविंद के दुश्मन से मदद उसे भाई बनाना, उसे अपने यकीन का सबसे पाक और सबसे प्या देना, कम फराखदिली नहीं ! बहन का प्यार ! हाय, वह मेरे लि ही सपने की चीज रहा है ! होठ उस अमृत को पीने को तड़पते रहे जब तुम उसके लिए प्याला भर कर बैठी हो, तो तुम्हारे पास तक रास्ता नहीं ! अफसोस, कहीं मेरे आने के पहले ही ....

[पट-परिवर्तन]

चौथा दृश्य

स्थान—चित्तौड़गढ़ का वह भाग जहाँ पर जौहर की चिता रची गई थी।

[बादशाह हुमायूँ, और महाराणा विक्रमादित्य का प्रवेश]

विक्रमा०—लीजिए बादशाह, हम आ गए उस स्थान पर, जहाँ महाराणा साँगा की वीर-पत्नी मेवाड़ की परम पूज्या, महारानी कर्मवती १२०० क्षत्राणियों के साथ चिता पर चढ़ी थीं। उनके पवित्र शरीरों की भस्म यही है।

हुमायूँ—(बैठ कर हाथ जोड़ता हुआ) यह खाक वतन के लिए जान देने वालों के लिए दुनिया की सबसे बड़ी नियामत है। यह खाक इनसानियत की आँखों का अंजन है, इसे जो सर-आँखों पर लगायेगा उस पर हमेशा खुदा की मेहरबानी का साया रहेगा (खाक उठाकर सर पर लगाता है) यह तो अभी तक गरम है।

विक्रमा०—मेवाड़ का दिल भी अभी तक इसी तरह भीतर ही भीतर जल रहा है।

हुमायूँ—(खड़े होकर) यह आग दुनिया के अजाबों को जलाने वाली हो। महाराणा! बहन कर्मवती की चिता की यह आग, मजहबी तअस्सुब की जलन पैदा न करे। बेशक एक मुसलमान ने भारी भूल की थी, मगर दूसरे मुसलमान ने उसे सजा भी दे दी! बस इतना ही काफी है। महाराणा! मुसलमानों से नाराज न होना। सारे ही मुसलमान बुरे हैं, यह न समझना। इनसान और शैतान सब जगह होते हैं।

विक्रमा०—इसके उदाहरण तो आप ही हैं, बादशाह सलामत! आप जैसी फराखदिली किसमें हो सकती है? आपका हृदय प्रेम और दया का समुद्र है! आपका उपकार···· ·· ····

हुमायूँ—यह आप क्या कहते हैं, महाराणा! मैंने कोई अहसान नहीं किया! फराखदिली में आप हिंदुओं का हम मुसलमान मुकाबला नहीं कर

सकते । जिन राखी के धागों से बहनें भाइयों के सर खरीद लेती हैं वे मुसलमानों को कहाँ नसीब है ? मैं तो हिंदुओं के कदमों में बैठ कर करना सीखना चाहता हूँ ।

विक्रमा०—हिंदू और मुसलमान, ये दोनों ही नाम धोखा हैं, करने वाली दीवारें हैं । हम सब हिन्दुस्तानी हैं !

हुमायूँ—हिंदुस्तानी ही नहीं, इनसान हैं । हमें अब दुनिया किस्म की तंगदिली के खिलाफ जिहाद करना चाहिए हमारा काम गले पर छुरी चलाना नहीं, भाई को गले लगाना है, भाई को ही न को भी गले लगाना है । दुनिया के हर एक इनसान को अपने दिल के के दरिया में डुबो लेना है । बहन कर्मवती ने इसी दरिया के दो बा हिंदू और मुसलमानों को जिस मुहब्बत के धागे में बाँध दिया है, वा टूटे मैं खुदा से यही चाहता हूँ ।

विक्रमा०—दोनो ही कौमे एक दूसरे पर शासन करने की छोड़ कर, प्रेम करना चाहें, आपकी तरह प्रेम करना चाहें, तो कभी न टूटेगा, बादशाह साहब !

(तातारखाँ का प्रवेश)

हुमायूँ—ऐसे घबड़ाये से क्यों हो तातार ? क्या खबर है ?

तातारखाँ—बादशाह सलामत ! खबर अच्छी नहीं है । बंगाल और बिहार पर कब्जा कर लिया है और वह दिल्ली की त चला आ रहा है ।

विक्रमा०—बादशाह साहब ! मैं देखता हूँ, मेवाड़ की रक्षा कीमत आपको बहुत ज्यादा देनी पड़ रही है !

हुमायूँ—बहन के प्यार की कीमत, इन राखी के धागों की दुनिया की बादशाहत और बहिश्त की सल्तनत से भी बढ़क

बहन धर्मवती के बदनों की राख भर पर न चढ़ा सका। उसकी कमी को उनकी चिता की धून से पूरी करना हूँ। मैंने मेवाड़ आने में जो देर की उसकी सज़ा मुझे अभी भुगतनी है! चलिए महाराणा, आपको बाकायदा मेवाड़ के तख्त पर बैठा कर अपने सर से राखी का कुछ कर्ज उतार लूँ!

(सब चलने लगते हैं)

हुमायूँ—ठहरो! एक दफा और बहन की चिता पर अपना सर झुका लूँ! फिर यह सर धड़ पर कायम रहे न रहे! एक मर्तबा और अपनी बहिश्त में बैठी बहन से माफी माँग लूँ; फिर यह जबान बन्द ही हो जाय तो किसे ग़म! (चिता के पास घुटने टेक कर हाथ जोड़ कर बैठ जाता है)।

[यवनिका]

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. 'राखी' एकांकी की कथा को अपने शब्दों में लिखते हुए एकांकी में प्रस्तुत विचारधारा पर प्रकाश डालिए। आज की परिस्थितियों में उसकी सार्थकता पर अपने विचार भी प्रकट करिये।

२. हुमायूँ का चरित्र-चित्रण कीजिये।

३. राखी एकांकी का उद्देश्य है—
   (क) एक ऐतिहासिक कथा का वर्णन करना
   (ख) हुमायूँ का चरित्र-चित्रण करना
   (ग) धर्म के ऊपर मानवीय सम्बन्धों की प्रतिष्ठा करना
   (घ) हिन्दू-मुसलमानों के बीच एकता स्थापित करना
   सही विकल्प के आगे   का निशान लगाइये।

हर रोज इतने मनुष्य-पैदा होते हैं ? जीवन-सरिता को तो, अच्छी या बुरी तरह, सभी उतर जाते हैं, पशु पक्षी तथा कृमि कीट भी। सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य के लिए जीवन-वैतरणी का तरण ही सच्चा जीवन नहीं, हो नहीं सकता। (आगे बढ़ता है)

(चुपचाप कुछ पग बढ़, दाहिनी तरफ के मकान के ऊपरी भाग को देख रहे हो) क्या कहा, जो अर्थ इन सारे दृश्य जगत् का सचालन कर रहा है उसका उपार्जन ही सच्चा जीवन है ? (सिर झुका, कुछ सैकिण्ड सोच, फि[illegible] ऊपर देख) चाँदी—सोने के निर्जीव टुकडो का सग्रह सच्चा जीवन ? क्या क[illegible] रहे हो ? क्या सोच रहे हो ? जीवन का सार है सुख और सन्तोष। वह [illegible] से नहीं मिलता। ऐहिक आधिभौतिक सुख क्या सच्चे सुख हैं ? इनके [illegible] से क्या सच्चा सतोष प्राप्त हो सकता है ? फिर अर्थोपार्जन सच्चा जी[illegible] कैसा ? (कुछ रुककर) वह तो चुम्बक है कि जिसकी तरफ खिचने के [illegible] मनुष्य उसमे ऐसा फँसता है कि फिर कष्ट होने पर भी उससे अपने को [illegible] नहीं सकता। खुद खिचता है और फिर उस खिचाव से विलग होना [illegible] लिये ही असम्भव हो जाता है। (फिर कुछ रुककर) ना, ना, ना, [illegible] सच्चा जीवन नहीं, हो नहीं सकता (आगे बढ़ता है।)

(चुपचाप कुछ बढ़ कर, बाईं ओर के मकान के ऊपरी हिस्से [illegible] खड़े हो) क्या कहा, अधिकार-प्राप्ति सच्चा जीवन है ? (सिर [illegible] सैकिण्ड सोच, फिर ऊपर देख) ऊँहूँ, कभी नहीं। महन्त, राजा, जमीदार, साहूकार, राज-कर्मचारी ये सभी किसी न किसी तरह [illegible] प्राप्त जन हैं ; अगर अधिकार-प्राप्ति ही सच्चा जीवन है तो प्रायः [illegible] षड्यन्त्रों मे सलग्न क्यो रहते हैं ? येन केन प्रकारेण अपने अ[illegible] सुरक्षित रखने मे ही तो इनका सारा जीवन बीत जाता है, [illegible] पुश्त-दर-पुश्त। इसके लिए इनमे से अधिकाश कैसे-कैसे पापो [illegible] है ? ऐसे दुष्कर्मों को करने वाले कभी शान्ति का उपभोग [illegible] (फिर कुछ रुककर) फिर अधिकार-प्राप्ति सच्चा जीवन कैस[illegible] [illegible] प्राप्ति सच्चा जीवन नहीं, हो नहीं सकता।

(घुमाव कुछ कदम बढ़, दाहिनी तरफ के मकान के ऊपरी भाग को देख, खड़े हो) क्या कहा, पुरुष के लिए स्त्री और स्त्री के लिए पुरुष की प्राप्ति ही सच्चा जीवन है ? ह ह ह ह ह, ह ह ह ह ह, ह ह ह ह ह, (कुछ रुककर) भाई, मनुष्य ही नहीं विश्व की समस्त जीवित सृष्टि के नर ने योग्य मादे को और मादे ने योग्य नर को प्राप्त करने की हमेशा कोशिश की है, पर""पर यह सच्चा जीवन नहीं । अगर ऐसा होता तो इस प्रयास में इतना कलह, इतनी हत्याएँ, इतने युद्ध कैसे होते ? (कुछ रुककर) ना, ना, ना, यह" यह सच्चा जीवन नहीं, हो नहीं सकता ।

(अब युवक सामने की पहाड़ी-चोटियों के ऊपर से निकलती हुई रवि-रश्मियों को देख कर बिना दाहिनी बाईं ओर देखे जल्दी जल्दी आगे बढ़ता है । दोनों तरफ के मकानों में एकाएक कोलाहल होने लगता है । युवक कोलाहल सुनकर खड़ा हो जाता है । युवक के खड़े हो जाने पर कोलाहल बन्द हो जाता है ।)

युवक—(अपने दोनों हाथों से अपने दोनों कानों को थप-थपा दोनों ओर के मकानों के ऊपरी भागों को देख, मुस्कराते हुए) क्या कहा, सच्चा जीवन क्या है, यह आज बताना ही होगा, रोज रोज इस तरह काम नहीं चलेगा, नित्यः उषाकाल इसी रास्ते चल, यह सवाल उठा इस प्रकार सबको सङ्कल्प-विकल्प में छोड़, चले जाना उचित नहीं । (कुछ रुककर) अच्छा सुनो अगर मेरी राय सब के सब सुनना ही चाहते हो, तो कहूँगा । (कुछ रुककर) मेरे विनम्र मत से (उँगली उठा रास्ते को दिखाकर) ठीक रास्ते पर चलना, बिना विघ्न-बाधाओं की परवाह किये चलना, अथक चलना, निष्काम ही सच्चा जीवन है । हर चीज यात्री है । यात्रा ऐसी है जो अनन्तकाल से चली आई है और अनन्तकाल तक चलती रहेगी । हर मुसाफिरी में पड़ाव होते हैं । जीवन-यात्रा में भी पड़ाव हैं । इन पड़ावों पर विश्राम मिलता है, विचारने को समय प्राप्त होता है । कभी-कभी मुसाफिर रास्ता भूल भी जाता है । तब मार्ग ढूँढना पड़ता है । मुसाफिरी में सहना भी पड़ता है । वैतरणियाँ भी पार करनी पड़ती हैं । धन का भी उपयोग होता है । अधिकार भी काम आता है ।

बुनियाद—हाँ जानता तो हूँ, लेकिन असग़र से कम। वह तो इस इलाके का रहने वाला है। वह देखो उधर कुछ रोज़ दिखाई दे रहे हैं। आओ, हम वहीं चलें। और वह ऐसा लगता है कि सामने से हमारे दो साथी भी आ रहे हैं। आओ, जल्दी करें।

मुनीर—हाँ, हाँ चलिए। हमें एक बहुत बड़ा काम सौंपा गया है। उसे पूरा करना ही होगा। (धीरे-धीरे बातें करते हुए चलते हैं।) यहाँ तो कोई नहीं दिखाई दे रहा। वह उधर कुछ झाड़ियाँ हैं, कहीं वे लोग वहीं तो नहीं छिप गए ?

बुनियाद—हो सकता है। तुम ऐसा करो, जल्दी से वहाँ चले जाओ या ठहरो, मैं भी चलता हूँ। तुम अपनी टोपी लगा लो, जिससे हमको कोई देखे तो समझे कि हम इन्डियन सिविल डिफेन्स के आदमी हैं।

मुनीर—हो सकता है, किसी ने हमें उतरते हुए देख लिया हो और वे लोग इधर ही आने वाले हों। देखो, देखो, वे कौन हैं ?

बुनियाद—अरे, वे तो हमारे साथी ही हैं। असगर भी है। आओ, इधर से आओ (झाड़ियों के पीछे चलने की आवाज) तो तुम यहाँ हो अहमद ! तुमको अपना काम याद है ? तुमको बहुत जल्दी ही यहाँ से निकल जाना चाहिए।

अहमद— जी हाँ, मैं और अब्दुल दोनों गाँव में जाते हैं। वहाँ हमारे जान-पहचान का एक आदमी है।

बुनियाद—तो खुदा हाफ़िज़। जल्दी-से-जल्दी भारतीय जनता में पहुँचकर इस बात की कोशिश करो कि हिन्दू-मुसलमानों में लड़ाई हो जाए।

अहमद—इन्शाअल्लाह, खुदा हाफ़िज़ !

बुनियाद—खुदा हाफ़िज़ !

मुनीर—असग़र, तुम क्या सोच रहे हो ? तुम चुप क्यों हो ? कहीं चोट तो नहीं लगी !

असग़र—(चौंककर) एँ !

बुनियाद—तुम शायद गा रहे हो। इसी सूरे पर तुम हमारे साथ पर
क्या तुम नहीं जानते कि हम यहा एक-एक लमहा हमारे लिए कितना
है ?

असग़र—जी, मैं जानता हूँ। यह भी जानता हूँ कि हवाई अड्डे पर
रा करने वाले जहाजों को मुझे इशारा करना है। ख़तरे का यह काम मैं
री करने को तैयार हूँ।

मुनीर—सब सामान ठीक है ?

असग़र—जी हाँ।

बुनियाद—तो हम उधर खेतों मे जा रहे हैं। तुम्हारे साथ और
कौन है ?

असग़र—महमूद। ऐसा लगता है, वह यहाँ से कुछ दूर पहुँच गया
है। आप कोई फ़िक्र न कीजिए। मैं ढूंढ लूँगा।

बुनियाद—खुदा हाफ़िज़।

मुनीर - खुदा हाफ़िज़।

असग़र—खुदा हाफ़िज। (एक क्षण शांति रहती है। धीरे-धी
पदचाप उठती है, दूर होती है। आसमान मे हवाई जहाज संघर्ष करते
फिर शांति छा जाती है। उसी के भीतर से असग़र की आवाज उठती है।

असग़र—कहीं भी तो रोशनी नही दिखाई दे रही है। लेकिन मैं
कहाँ ? हवाई अड्डा उस तरफ ही तो नहीं ? हाँ, उसी तरफ़ होना चाहिए। त
तो हवाई जहाज़ इधर से होकर ही जायेंगे। देखूँ नक्शा। (नक्शा खोलने क
आवाज) हाँ, यही है। ठीक है, उस तरफ फैक्टरी है। बुनियाद और मुनीर
को वहीं जाना है। मेरे कपड़े तो ठीक है ? हाँ, हाँ। बिल्कुल हिन्दुस्तानी
किसान कैसे लगते हैं। अब्बा कहते थे कि मैं बिल्कुल हिन्दू जाट की तर
दिखाई देता हूँ। हिन्दू जाट, मुसलमान जाट, आखिर दोनो जाट ही तो हैं
(चौंककर) यह मैं क्या सोचने लगा ? यह कुफ्र है। हमारे मौलवियों
आज़ादी की इस लड़ाई को जिहाद का फ़तवा दिया है। जिहाद के इस मौ

पर मैं भी अपना फ़र्ज़ पूरा करूँगा (चौंककर) यह कौन आ रहा है ? ओह, मक़सूद ! (पुकारकर) मक़सूद, तुम कहाँ थे ?

मक़सूद—मजिल से ज़रा दूर जा उतरा था। यहाँ छिपने का कोई ठिकाना भी तो न था। खुदा का शुक्र है कि अन्धेरे की वजह से यहाँ तक सही सलामत पहुँच गया।

असग़र—तुम इतने कमसिन और खूबसूरत दिखाई देते हो कि तुमको देख लेने पर भी कोई शक नहीं कर सकता।

मक़सूद—ऐसे ख़तरे में भी तुम हँसी-मज़ाक करने की आदत नहीं छोड़ते। अब जल्दी करो। क्या हमें यहीं रुके रहना है। या उधर खेतों में चलना है ?

असग़र—मैं समझता हूँ कि हम यहीं रहें तो अच्छा है। यहाँ से हम अपने जहाज़ों को आसानी से इशारा कर सकते हैं। लोगों को हमारे यहाँ छिपने का कोई शक भी नहीं होगा। (क्षणिक सन्नाटा) लेकिन मक़सूद..........

मक़सूद—हाँ चुप क्यों हो गए। कहो न क्या कहते हो ?

असग़र—कुछ नहीं ऐसे ही ख्याल आ गया था। सोचता था कि इतनी जल्दी हमको बुलाया और पहले कुछ बतलाए बिना यहाँ भेज दिया। सिर्फ़ आधा घण्टा पहले ही तो उन्होंने हमें सब कुछ बताया था।

मक़सूद—तो क्या हुआ ? यह आज़ादी की लड़ाई है। हिन्दुस्तान को हमें हमेशा के लिए सबक सिखाना है। उसकी बेवक़ूफ़ी की हरकतें हम कब तक सहते रहें ?

असग़र—ठीक है, ठीक है, मैं यह नहीं कहता।

मक़सूद—तो फिर क्या कहते हो ? तुम्हारी तबियत तो ठीक है ?

असग़र—बिल्कुल ठीक है। तुम फ़िक्र मत करो। आराम से अपना मोर्चा संभालकर बैठ जाओ। अपने हथियारों का ध्यान रखो। मैं तब तक ज़रा आसपास घूम लूँ।

मक़सूद—तुम यहाँ से जा तो नहीं रहे ?

असग़र— बस इन झाड़ियों के पीछे-पीछे उस नाले की ढलान तक जाऊँगा। हाँ, तुमने एक बात देखी ?

मक़सूद—क्या ?

असग़र—ऐसा लगता है कि यहाँ के किसानों को किसी बात की फ़िक्र नहीं है। वे अपने खेतों को हमेशा की तरह जोत-बो रहे हैं। उधर देखो, वे जुते हुए खेत और उधर वह ईख और मकई की फ़सल।

मक़सूद—वह देखने की मुझे फ़ुरसत नहीं है। अन्धेरे में यह सब कोई कैसे देख सकता है ? मैं तो बस उस वक्त की राह देख रहा हूँ, जब हमारे हवाई जहाजों की आवाज कानों में पड़ेगी और मैं उन्हें इशारा कर सकूँगा।

असग़र— वह तो करना ही है। इस बार इनको सबक़ सिखाना ही है। लेकिन, तुमने देखा आज आसमान में हमारी और उनकी लड़ाई कितनी तेज हुई। समझ में नहीं आता, उनके ये छोटे-छोटे पिद्दी-से नेट कैसे हमारे बड़े-बड़े सुपर-सॉनिक जेट हवाई जहाजों को परेशान कर देते हैं ? कैसे निडर और कैसे हिम्मतवाले हैं उनके हवाबाज़ !

मक़सूद—यह तुम क्या सोचने लगे ? तुम्हारे दिमाग़ में ऐसे बुरे-बुरे ख़याल आते ही क्यों हैं ? क्या तुमने नहीं सुना कि हमने उनके कितने जहाज़ गिरा दिए हैं ? कितने टैंक बरबाद कर दिए हैं ? उनके कितने शहर आग की लपटों में झुलस रहे हैं ?

असग़र—और आज यह शहर भी आग की लपटों में झुलसेगा (हँसकर) अच्छा, मैं अभी आता हूँ। होशियार रहना (क्षणिक सन्नाटा, दूर जाती और फिर पास आती हुई पदचाप) हूँ, तो जीत हमारी हो रही है। हाँ, कहा तो यही जा रहा है और यूँ जीत होनी भी चाहिए। इन काफ़िरों ने परेशान कर दिया है। इस बार इनका सिर कुचल दिया जायेगा। भला ये कश्मीर पर अपना दावा कैसे जता सकते हैं ? नहीं जता सकते। दुनिया में कोई भी इनकी बात नहीं सुनना। फिर भी·········(चौंककर) अरे यह क्या है ? ओह ! यह तो वह पुराना खंडहर है। धुँधलके में कैसा नजर आता है। (पास आकर)

रही है। छाव भी दैने-का-वैसा मजा है। लेकिन शायद कोई इसकी देख-भाल नहीं करता। एक-एक ईंट करके यह खत्म हो रहा है। सब कुछ खत्म हो जाता है। अमन भी, जंग भी, यह जंग भी खत्म हो जायेगी। चलूँ जरा इसके भीतर तो देखूँ। बचपन में घर से भागकर मैं यहीं आकर तो छिपता था और अब्बा परेशान होते रहते थे। और फिर आखिर यहीं से पकड़ कर ले जाते थे। इसी के पास से तो वह गाँव का रास्ता गया है। वह दूर आसमान में जो भाग की तरह दिखाई दे रही है वे मस्जिद की मीनारें ही तो हैं। हाँ, वही हैं। और यह इधर क्या है? चौपाल। शायद अभी बनी है, और उसके चारों तरफ ये ऊँचे-ऊँचे पेड़! इन पेड़ों के पास वही तो रहट है। रहट का वह मीठा-मीठा ठंडा पानी, मन करता है खूब पीऊँ ""शायद वहीं कहीं नया नाला भी है। चलूँ, जरा देखूँ तो सही (सहसा चौंककर) नहीं, नहीं, मुझे गाँव के पास नहीं जाना चाहिये। उधर चलना चाहिए। वह क्या है? शायद लाइन पर कोई ट्रेन चली आ रही है। (ट्रेन की सीटी दूर से पास आकर फिर दूर निकल जाती है) यही तो वह ट्रेन है, जिसमें बैठकर मैं शहर जाया करता था। अक्सर बिना टिकट भाग जाता था। क्या अब नहीं जा सकता?""""नहीं-नहीं, यह सब कमजोरी है। यह सब मेरे दिमाग में क्या आ घुसा? यह जिन्दगी-मौत का सवाल है, वतन का सवाल है। मेरा प्यारा वतन, मेरा प्यारा पाकिस्तान, पाकिस्तान"""" (क्षणिक शान्ति) लेकिन क्या सचमुच हमने पाकिस्तान चाहा था ""क्या सचमुच? ना, ना, हमने तो नहीं चाहा, इन गाँवों के रहने वाले मुसलमानों ने तो कभी मुस्लिम लीग का साथ नहीं दिया। सदा जमीयत के साथ रहे। लेकिन फिर भी हमें यहाँ से जाना पड़ा। जब दोस्त, दोस्त नहीं रहे, तो हम जाने को मजबूर हो गए। वह कैसी मजबूरी थी? इसी धरती पर हमारे बड़े पैदा हुए। इसी धरती की गोद में वे सो गए। उनके मन में कभी यहाँ से जाने का ख्याल आया ही नहीं। (चौंककर) लेकिन मैं यह क्या सोचने लगा? मैं यह सब नहीं सोचूँगा। यह शैतान का काम है, यह गुनाह है। मैं आकबत के वक्त इस गुनाह का क्या जवाब दूँगा? नहीं, नहीं, मुझे लौटना चाहिए।

अपने साथियों के पास जाकर बैठना चाहिए। (तेजी से चलने की आवाज) लेकिन यह कैसी खुशबू आ रही है, कैसी खुशबू! यह ईख के खेतों से होकर तो नहीं आ रही? आह! यह भीनी-भीनी गंध तो वह उधर मकई के खेतों से आने वाली मीठी-मीठी महक। याद नहीं पड़ता कि पहले भी क्या यहाँ ऐसा ही था। जहाँ तक याद पड़ता है, सब वीराना था, पेड़ों पर पत्ते नहीं थे। खेतों में फसल नहीं थी। हवा रेत उड़ाती रहती थी। मैं किसी गलत जगह पर तो नहीं आ गया? ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता हूँ, एक अजीब-सी महक मेरे दिमाग में भरती जाती है। अनाज की महक, दानों की महक, सौंधी-सौंधी मिट्टी की महक। (चिड़ियाँ चहचहाती हैं) लो चिड़ियाँ चहकने लगीं। पौ भी फट रही है। बहुत जल्दी चारों तरफ रोशनी फैल जाएगी (गीत का स्वर) लो उधर खेतों में कोई गीत गा रहा है। क्या इन लोगों को लड़ाई का जरा भी ध्यान नहीं है? क्या सचमुच ये इतने निडर हैं।

[क्षणिक सन्नाटा, तेज-तेज चलने की आवाज जिसमें गहरी सांस खींचने की आवाज मिल जाती है। फिर मकसूद की आवाज उठती है।]

मकसूद—असगर। असगर तुम कहाँ चले गए थे?

असगर—कहीं नहीं, बस यही देख रहा था कि ठीक जगह पर तो हैं। बेशक हम ठीक जगह पर हैं। अब काफी देर तक यहीं पड़े रहना होगा।

मकसूद—और उसके बाद?

असगर—उसके बाद क्या होगा, यह सोचने का हमें कोई हक नहीं है। हमें सोचने का कोई हक है ही नहीं। हम आजाद कहाँ हैं? हम बोल नहीं सकते। हम लिख नहीं सकते!

मकसूद—असगर, यह क्या कह रहे हो?

असगर—क्या मैं गलत कह रहा हूँ? क्या हम भेड़-बकरियों के झुण्ड की तरह नहीं है? जिधर हांक दिया, चल पड़े।

मकसूद—दुश्मन की धरती पर आकर तुम्हारे दिमाग में ये कैसे ख्याल भर आए? क्या यह बगावत नहीं है? क्या तुम यहाँ पर दुश्मन को बरबाद करने की कसम खाकर नहीं आए थे।

असगर—आए हैं, लेकिन मन से नहीं। मन की आजादी है ही कहाँ! एक दिन यहाँ से जाने को मजबूर हुए। आज आने को मजबूर हुए हैं। क्या मैं कुछ गलत कह रहा हूँ?

मकसूद—(झिझककर) गलत तो नहीं कह रहे हो, लेकिन खाने-पीने के सामान की तो कोई कमी नहीं है। लाओ बोतल दो, मैं जरा पानी पीऊँगा।

असगर—(हँसकर) ये लो। बुझा लो अपनी प्यास। लेकिन पानी से क्या इन्सान की प्यास बुझती है? उसकी प्यास बुझ सके, शायद ऐसी कोई चीज वह अभी तक खोज नहीं पाया है।

(अन्तराल संगीत, फिर सहसा कहीं दूर गोली की आवाज उठती है। एक मिनट बाद कुछ व्यक्तियों के बोलने की आवाज पास आती है।)

मकसूद—(घबराकर) यह क्या? ये लोग कौन हैं? ये तो इधर ही आ रहे हैं। शायद इन लोगों को पता लग गया है। जल्दी अन्दर हो जाओ और साँस रोककर लेट जाओ

असगर—या खुदा, या पाक परवरदिगार! (आवाजें पास आ जाती हैं।)

चौधरी साहब—मैंने अपनी आँखों से देखा है। जिस वक्त हमारे जवान दुश्मन के जहाजों पर आग बरसा रहे थे तो एक हवाई जहाज इधर आया था।

लालाजी—जी हाँ, मैंने भी एक जहाज को जलते हुए नीचे गिरते देखा है। वह इतनी तेजी से गिरा, जैसे आग का गोला गिरा जा रहा हो।

चौधरी साहब—पर, जिस जहाज को मैंने देखा था, उसमें आग नहीं लगी थी। वह इधर आया, नीचे झुका और मोड़कर चला गया।

इन्सपेक्टर—हाँ, हाँ, मुझे भी यही पता लगा है कि एक जहाज यहाँ से ठीक-ठाक वापस चला गया।

लालाजी—उसी ने कुछ आदमियों को नीचे उतारा है।

सरदार जी—जी हाँ, मैंने अपनी आखों से देखा है। मैंने उन आदमियों को उतरते हुए देखा है। दस-पन्द्रह होंगे।

इन्सपेक्टर—लेकिन वे गए कहाँ ? क्या गाँव में छिपे हैं ?

सरदार जी—हो सकता है, एक-आध गाँव में भी हो। पर यहाँ काफी खेत है। इधर वह घना जंगल है। खण्डहर हैं, झाड़ियां हैं।

इन्सपेक्टर- तो आप सब लोग चारो तरफ फैल जाएँ। हथियार अपने पास रखिए। वे लोग जरा भी परेशान करें, तो गोली मार दें। लेकिन जिन्दा पकड सकें तो बहुत ही अच्छा है।

लालाजी—हम अभी उन्हें घेर लेते हैं। आखिर बचकर कहाँ जायेंगे

इन्सपेक्टर—चौधरी साहब यह खेत किसका है ? मुझे डर है [illegible] खड़ी फसल को अभी काट डालना होगा।

चौधरी—आप इसकी बिल्कुल चिन्ता मत कीजिए। देश के लिए [illegible] बड़े-से-बडा बलिदान करने को तैयार हैं। किसके हैं, यह बाद मे देखा जाएगा। आप ट्रैक्टर मँगवाकर कटवा डालिए।

इन्सपेक्टर—ट्रैक्टर अभी आ रहा है। शायद वह आ भी गया [illegible] मुझे यकीन है पैराट्रूपर यहीं कहीं छिपे हैं। आओ इधर खेतो की ओर [illegible]

(आवाजें धीरे-धीरे दूर होती हैं। क्षणिक सन्नाटे के बाद असग[illegible] आवाज उभरती है।)

असगर—आखिर इन्हें पता लग ही गया। थोडी देर मे ये लोग घेर लेंगे।

मकसूद—तो क्या हुआ ? तुम क्या सोचकर घर से निकले थे [illegible] [illegible]र धड की बाजी लगाई थी। अब क्यो घबराते हो ? अगर [illegible] [illegible] ो देंगे, जरूर देंगे। और अब हमारे हवाई जहाज भी [illegible] वे जल्दी ही आ जाते।

असग़र—(खोया-खोया) जब खाना होगा, खा जाएँगे।

मक़सूद—तुम फिर कहाँ खो गए। क्या सोचने लगे?

असग़र—कुछ नहीं, कुछ नहीं।

मक़सूद—कुछ तो है।

असग़र—क्या तुम जानते हो यह चौधरी कौन है?

मक़सूद—होगा इस गाँव का कोई आदमी।

असग़र—हाँ, इसी गाँव का है। मैं इसे बचपन में ताऊ कहकर पुकारता था। बिल्कुल भी तो नहीं बदला। १८ साल गुज़र गए, लेकिन इसके चेहरे पर वही रोब है, आवाज़ में वही रोब है, आवाज़ में वही कड़क। तब मैं १६ वर्ष का था। कितना प्यार करता था यह मुझसे! जाते समय इसने कहा था, "अच्छा, जाते हो तो जाओ, लेकिन यह याद रखना कि इस गाँव में तुमको कोई तकलीफ़ नहीं थी। काश, तुम यहीं रहते लेकिन ख़ैर, वक़्त ही ऐसा है। रोकूँगा नहीं। लेकिन ध्यान रखना कि हम दोस्त हैं, दोस्त ही रहेंगे।"....उस दिन हम सब रोए थे और आज कैसी अनोखी बात है। एक बिल्कुल दूसरे ही माहौल में मैं उनको देख रहा हूँ। उन्होंने कहा था हम दोस्त हैं, लेकिन आज तो हम दुश्मन हैं। सच तो यह है कि साथ रहते थे तब भी दुश्मन हैं। दुश्मनी का माहौल! आह! क्या यह माहौल बदल नहीं सकता, क्या हम कभी एक-दूसरे का प्यार नहीं कर सकते, क्या इन्सान ·········

मक़सूद—तुम्हें यह क्या हो रहा है, इस वक़्त? होश में आओ। हमने अपने प्यारे वतन की खिदमत करने की क़सम खाई है। हमें अपने वतन पर नाज़ है। ऐसे मौक़े पर तुम्हारे दिल और दिमाग़ पर यह कैसी कमज़ोरी छा रही है?

असग़र—नहीं नहीं, कमज़ोरी नहीं है। मैं बिल्कुल ठीक हूँ। मैं कुछ और कर ही नहीं सकता। तुम फ़िक्र मत करो।

मक़सूद—आख़िर दिन डूबने लगा। बहुत जल्दी ही रात के अँधियारे में सब कुछ डूब जाएगा। सब कुछ (ट्रैक्टर की आवाज़) यह क्या, ट्रैक्टर!

खेत काट रहे हैं। तो हमारे साथी फँस जायेंगे, या खुदा! (दूर से हवा
के आने की आवाज आती है)।

मकसूद—देखो, देखो ये किसके जहाज हैं? शायद हमारे हों।
हमारे ही हैं। आओ, आओ हम जल्दी से इन्हें इशारा करें।

असग़र—नहीं, नहीं, मैं कुछ नहीं कर सकता। मेरे हाथ काँप
ये निहत्थे इन्सानों पर बम क्यों डालते हैं? क्यों बेक़सूर, बेगुनाह......

मकसूद—ये कैसी बातें करते हो? तुम गद्दार हो।

असग़र—चुप रहो। उन्होंने हमारे साथ कौन-सा अच्छा सलू
है। ये सियासतवाले हर मुल्क में अपना उल्लू सीधा करने के लिए भ
गड़ा करते हैं और लोगों को परेशान करते हैं। (गोली चलने की आ
यह लो गोली चली। शायद खेत कट जाने पर हमारे साथी घिर गये।
बार गोली चलती है)।

मकसूद—हमें उनकी मदद के लिए चलना चाहिए।

असग़र—चुप रहो, वहाँ पर जाना खतरे से खाली नहीं है।

[गोली चलती है, चीख की आवाज उठती है। धीरे-धीरे पास आ

मकसूद—वे इधर ही आ रहे हैं। गोली चलाने के लिए।

असग़र—मैं तैयार हूँ।

[आवाजें बिल्कुल पास आ जाती हैं]

चौधरी—इधर इन्स्पेक्टर साहब। इधर भी कुछ लोग छिपे हुए
हमें अफसोस है, हम कुल तीन आदमियों को पकड़ सके। बाकी शायद
छिपे हैं। आप उस खेत में देखिए, मैं इन झाड़ियों की ओर देखता हूँ।

[ट्रैक्टर चल रहा है। गोली चलती है। चीख उठती है]

मकसूद—(काँपकर) कैप्टन बुनियाद और उनके साथी भी पकड़े
या खुदा! या अल्लाह, यह क्या हो गया? यह क्या हो गया?

चौधरी—(कड़ककर) इन दोनों को बाँधकर ले चलो। वे हमें भुलावे में डालना चाहते हैं। इनका विश्वास मत करो।

असग़र—चलिए, हम तैयार हैं। (जाने की पदचाप)।

चौधरी—(खोया-खोया) यह क्या हो गया। समझ मे आता नहीं यह कैसा जादू है? यह सचमुच असग़र है? असग़र, लतीफ का बेटा, इ गाँव का लड़का! लतीफ इसी गाँव में तो रहता था। वह मेरा दोस्त था पड़ोसी था। इसको मैंने अपनी गोद में खिलाया है। वह रामसिंह के स खेल-खेलकर बड़ा हुआ है। और रामसिंह आज मोर्चे पर है, यह भी मोर्चे पर है, लेकिन यह कैसा मोर्चा है. यह तो........दुश्मन का जासू और कुछ नहीं, केवल दुश्मन। (एकदम) नहीं, नहीं, यह सब मैं नहीं सोचूँगा।

इन्सपेक्टर—(दूर से) आइए, चौधरी साहब, उधर अब नहीं है।

चौधरी—आ रहा हूँ साहब। आ रहा हूँ। (जाते जाते) असग़र........नहीं, नहीं, कोई असग़र नहीं। केवल जासूस, दुश्मन, का जासूस। (संगीत उभरता है) पर यह सचमुच असग़र है। त पहचानता हूँ। और यह भी अपनी धरती को पहचान गया है। त वापस लौटा है...........नहीं, नहीं, यह सब छल है, निरा छल छल लतीफ़...........असग़र........... ताऊ .... मेरी समझ नहीं आ रहा। एक धरती, एक आसमान, फिर भी आदमी आदमी क ....नहीं, नहीं, (चीखकर) आज यह दुश्मन है........केवल दुश्म केवल जासूस और जासूस की सजा........... ओह, ओह यह कैसा मि कैसी वापसी ....

[दूर होते भाव-विह्वल स्वर और उन्हीं के ऊपर उभरता है स संगीत जो दूर पर उठती हुई गोलियों की आवाज़ में लय हो जाता है

स्त्री—हम उनके स्मारकों और स्मृति-चिन्हों को भी देखना च

स्वागताधिकारी—आपको सारी चीजें देखने की सभी सुविध जायेंगी। (पुरुष से) लेकिन आप अतिथि-शाला में जायँ, उसके पहं निवेदन है।

पुरुष—आज्ञा दीजिये !

स्वागताधिकारी—हमारे यहां आज्ञा नहीं दी जाती, निवेदन जाता है। निवेदन यह है कि यदि आपके पास कोई अस्त्र-शस्त्र हो, त यहीं रख दीजिये।

पुरुष—(शंकित) ओहो ! तो आप मुझे निःशस्त्र करना हैं। यह तो किसी परदेशी पर अत्याचार है।

स्वागताधिकारी—(हँसता हुआ) ह-ह-ह ! हर विदेशी ऐस कहता है। महोदय, हम आपसे शस्त्र यहीं रख देने को इसलिये कहते हमारे यहां शस्त्र रखना बर्बरता और पशुता का चिह्न समझा जाता आदमी ने शस्त्र का प्रयोग बनैले भैंसों, बाघ, सिंहों और विषधर ना सीखा ! पूज्य बापू ने हमें अहिंसा का पाठ सिखाया था, हमारे गले के भी पहले यह बात नहीं उतरती थी।

पुरुष—किन्तु, यदि हम पर प्रहार किया जाय, तो हम आत्म कैसे करेंगे ?

स्वागताधिकारी—प्रहार ! हमारे देश में, बापू के इस राम-राज कोई किसी पर प्रहार नहीं करता ! हम सब पूर्ण सभ्य हो चले हैं—आ जितना बर्बर और असभ्य रहता है, उतना ही क्रूर और हिंसक होता ज्यों-ज्यों सभ्यता आती जाती है, त्यों-त्यों वह दयालु और अहिंसक ह जाता है। सभ्यता की पहचान ही है अहिंसा।

स्त्री—आपकी बातें सहज में बहुत निकट मालूम होती है।

स्वागताधिकारी—बापू कहा करते थे, अहिंसा का सन्देश सबसे

स्त्रियाँ और बच्चे समझते हैं। बापू के कथनानुसार पहला सत्याग्रही एक बच्चा था।

पुरुष—तो क्या आपके देश में सेना भी नहीं रखी जाती ? यहाँ इस हवाई अड्डे के अगल-बगल कहीं किसी सैनिक या प्रहरी को नहीं देखकर मुझे कुछ आश्चर्य हो रहा था।

स्वागताधिकारी—नहीं। हमारे देश में सेना नाम की कोई चीज नहीं जब हम स्वतन्त्र हुए थे, कुछ दिनों तक हमने सेना रखी। हम लड़ाइयों में शामिल हुए। किन्तु धीरे-धीरे सब व्यर्थता सिद्ध हो गई।

पुरुष—और, यदि कोई आपके देश पर चढ़ाई करे, तब ?

स्वागताधिकारी—कैसी बातें करते हैं आप ? क्या इस वैज्ञानिक युग देशों पर चढ़ाई करने की जरूरत रह गई है, जबकि एक छोटी-सी पुड़िया रे संसार को भस्म कर सकती है ? इन परमाणु अस्त्रों के बाद फिर सेना क्या सार्थकता रह गई ? वह तो जहाँ की तहाँ खड़ी रह जायेगी या ढेर जायेगी।

पुरुष—आपके देश को भस्म नहीं करके आपको गुलाम तो बनाया जा कता है।

स्वागताधिकारी—ह-ह-ह ! गुलाम बनाया जा सकता है ? एक बार में गुलाम बनाया गया था। उनका शस्त्र-बल भी असीम समझा जाता था। न्तु बापू की अहिंसा के सामने उनकी कोई शक्ति कायम आई ? और उस मय तक अहिंसा पर हमें ऐसी आस्था भी नहीं थी। बस, देश में सिर्फ एक ट्ठी लोग अहिंसक थे। उन्हीं को लेकर बापू ने उस समय के संसार के सबसे ड़े शक्तिशाली राष्ट्र को भगा दिया। आज तो हमारा बच्चा-बच्चा अहिंसा ा मर्म समझ चुका है।

पुरुष—जी लीजिए, यह पिस्तौल !

स्वागताधिकारी—अहा, उफ....

पुरुष—रस और भोजन के लिए हमें क्या देने पड़ेंगे ? क्या आप हमें बता सकेंगे ?

प्रबन्धक—हः हः हः क्या देने पड़ेंगे ? क्या लेने पड़ेंगे—विदेशियों के मुँह से यह सुनते-सुनते हम तो हैरान हैं। महोदय, क्या आपको वायु के लिए कोई मूल्य देना पड़ता है ? जल के लिए कोई मूल्य चुकाना पड़ता है ? फिर भोजन के लिए मूल्य क्या ? यह तो मनुष्य की प्रारंभिक आवश्यकता है ! और, क्या अपनी छाया के लिए कोई वृक्ष मूल्य खोजता है, जो यह कक्ष आपसे कुछ मांगे ?

स्त्री—तो यहाँ भोजन और आवास....

प्रबन्धक—हाँ, बापू के राम-राज्य में भोजन और आवास पाने का अधिकार सब नागरिकों को प्राप्त है। फिर, आप तो अतिथि हैं।

पुरुष—धन्य है आपका देश, धन्य है बापू का रामराज्य। हम इसी रामराज्य को देखने तो आये हैं। उसके लिए क्या प्रबन्ध रहेगा।

प्रबन्धक—आपको सेवा में पथ-प्रदर्शक पहुँच जायेंगे। आप जहाँ चाहें, निस्संकोच जा सकते हैं। आप क्या-क्या देखेंगे ?

पुरुष—कुछ तो उतरते ही देख चुका। मैं विशेषतः उद्योग-धन्धे और खेतीबारी...

स्त्री—और, मैं बच्चों की शिक्षा और पारिवारिक जीवन !

प्रबन्धक—अच्छा चुनाव ! पुरुषों के हिस्से उद्योग-धन्धे, खेतीबारी, स्त्रियों के जिम्मे पारिवारिक जीवन, भावी नागरिकों की शिक्षा-दीक्षा। बापू के राम-राज्य में भी यही व्यवस्था है और यही व्यवस्था उचित भी है। क्यों ?

(स्त्री और पुरुष हँस पड़ते हैं)

तृतीय दृश्य

(दूर से सामूहिक गीत और वाद्य की झंकार)

रूप—मैं आप कहाँ ले आये ? यहाँ क्या कोई संगीतशाला है ?

स्त्री—अहा, कितनी मधुर झंकार।

पथ-प्रदर्शक—संगीतशाला नहीं, यह तो श्रमशाला है, ि
कारखाना कहा जाता था। पहले हम कारबार पर जोर देते थे, अब
महत्व देते हैं।

पुरुष—कारखाने में संगीत?

पथ-प्रदर्शक—श्रम और संगीत में प्रारम्भ से ही अविच्छेद
रहा है न। संगीत की उत्पत्ति ही श्रम से हुई। हमारी स्त्रियां प्रारम्
चक्की पीसते समय, धान कूटते समय, गाती रही हैं। हमारे मजदूर ना
समय, हमारे किसान बड़ी-बड़ी शहतीर उठाते समय भी गाते रहे हैं।
ज्यों-ज्यों हम तथाकथित सभ्य होते गए, श्रम से संगीत को अलग करते
फल यह हुआ कि श्रम मेहनत एक नर्क-क्रिया हो गयी है—उकताने
थकाने वाली, असमय वृद्ध बनाने वाली! अब फिर से हमने श्रम को सं
साथ शामिल करके काम को खेल बना दिया है।

पुरुष—पहले हमें कार्यालय में ले चलिए, वहां मैनेजर से मु
करके तब भीतर चलेंगे।

पथ-प्रदर्शक—मैनेजर! अब हमारी श्रमशालाओं में किसी
की आवश्यकता नहीं रह गई है। प्रारम्भ में हमने प्रबन्धक रखा
क्योंकि उस समय तक हममें पुरानी आदतें थीं; जो हमें काम चोर
थीं। किन्तु, धीरे-धीरे वह आदत दूर हो गई। अब तो लोग स्वयं श्रम
में उसी प्रकार आ जाया करते हैं जैसे पहले सिनेमाघरों में खुशी
जाते थे।

पुरुष—तो वेतन आदि का निर्णय कैसे करते हैं आप लोग?

पथ-प्रदर्शक—वेतन? ह-ह-ह! वेतन कौन दे और किस को
समाज की श्रमशाला है; समाज उसके फलों का उपभोक्ता है। अपनी
के अनुसार सभी श्रम करते हैं और अपनी आवश्यकता के अनुसार
उपभोग करते हैं।

स्त्री—किन्तु, कितने ही देशों में तो यह प्रयोग असफल हुआ।

पथ-प्रदर्शक—क्योंकि उन लोगों ने दबाव और जोर से काम लेना चाहा। बापू की कर्मविधि तो जन-प्रेरणा के जगाने पर निर्भर होती है। हमने उनकी विधि अपनाई, हम सफल हुए। हाँ एक बात और—

स्त्री—क्या ?

पथ-प्रदर्शक—बापू बड़े-बड़े कारखानों के विरुद्ध रहे हैं। बड़े-बड़े कारखानों में मशीन ऊपर रहती है, आदमी उसके नीचे कुचला जाता रहता है। इससे मनुष्यता विकसित नहीं हो पाती। फलतः मनुष्य और मशीन में द्वन्द्व रहता है, उत्पादन में त्रुटि होती है। फिर एक बड़े कारखाने के बन्द होने से देश भर में हाहाकार मच जाता है। अतः हमने छोटी-छोटी श्रमशालाएँ ही बनाई हैं—जहाँ हर आदमी हर आदमी को पहचान सके, अपना सके, अपना भाई बना सके। और यदि एकाध श्रमशाला में उत्पादन कम भी हुआ; तो देशव्यापी दुष्प्रभाव नहीं पड़ सकते।

(भोंपू की आवाज)

स्त्री—अरे, क्या कारखाना बन्द होने जा रहा है? आह, हम इस अलौकिक प्रयोग को देख न सके।

पुरुष—हाँ, इस विचित्र प्रयोग को हम आँखों से देखना चाहते थे, महाशय!

पथ-प्रदर्शक—भोंपू तो बज गया, किन्तु जल्द निकलता कौन है? काम को तो हमने खेल बना दिया है। बच्चे क्या खेल के मैदान को जल्द छोड़ते हैं? तीन बार ऐसा भोंपू बजेगा, तब कहीं श्रमशाला खाली होगी। (संगीत का स्वर तेज होता है) सुनिये, भोंपू बजते ही संगीत कितना ऊँचा हो गया—चलते-चलाते थोड़ा और श्रम, थोड़ा और संगीत।

स्त्री—तो हम तेजी से चलें।

पुरुष—हाँ-हाँ तेजी से ही।

चतुर्थ दृश्य

(बच्चों का कलरव सुनाई पड़ता है)

एक बच्चा—देखो, देखो मेरे गुलाब में यह कितना सुन्दर फूल आया है। इसका रंग है गुलाब का और गंध रजनी-गंधा की। कैसा किया है मैंने।

दूसरा बच्चा—और इधर देखो, क्या ऐसा आलू तुमने कहीं था? मैंने इसके लिए खास खाद बनाई थी। कुछ टमाटर का नासपातों का।

तीसरा बच्चा—अरे भाई, दोनों इधर आओ और देखो मेरी पुस्तक-धारिणी! इस पर पुस्तकें फेंक भी दो, तो वे आप-ही-आप मे सज जायेंगी। कैसी कारीगरी की है मैंने?

शिक्षक—बच्चो, अब इधर आओ, थोड़ा सैद्धान्तिक ज्ञान भी ले लो।

सब बच्चे—आये गुरुदेव!

(स्त्री, पुरुष और पथ-प्रदर्शक का प्रवेश)

स्त्री—क्यों महोदय, यही आपकी पाठशाला है?

शिक्षक—हाँ, यह हमारी पाठशाला ही तो है।

पुरुष—यह पाठशाला है या उद्योगशाला?

शिक्षक—यों समझिये तो पाठशाला, उद्योगशाला और प्रयोगश तीनों एक साथ? बापू ने शिक्षा का यह नवीन प्रयोग प्रारम्भ किया जिसे वह मौलिक शिक्षा-पद्धति कहते थे। बच्चों का सबसे पहला काम है, दूध पीना फिर खेलना। भोजन के साथ खेल को जोड़ दीजिये और इन दोनों का सम्बन्ध शिक्षा से कर दीजिए, बस शिक्षा का यही मूल पकड़ कर हम आगे बढ़ते हैं। इसी से यह मौलिक शिक्षा कहलाती है।

स्त्री—आपके रामराज्य की सब चीजें ही विचित्र हैं। क्या मैं बच्चों से बातें कर सकती हूँ?

शिक्षक—क्यों नहीं ? रामू ! इनसे बातें तो करो बेटा ।

स्त्री—आप किस वर्ग में पढ़ रहे हैं ?

बच्चा—वर्ग ? वर्ग क्या है ? बापू के समाज में वर्ग ?

स्त्री—(शिक्षक से)—यह बच्चा क्या कह रहा है ? क्या यहाँ पाठ-शालाओं में वर्ग नहीं रखे जाते हैं ?

शिक्षक—नहीं श्रीमती जी, (बच्चे से) रामू, यह जानना चाहते हैं कि तुम क्या सीख रहे हो ?

बच्चा—जमीन और बीज़ के भेदों को समझ चुका हूँ, अब मौसम के भेद से जमीन और बीज़ के भेद के बारे में प्रयोग कर रहा हूँ। क्या ऐसा गेहूँ नहीं बनाया जा सकता कि जो धान के मौसम में.......

स्त्री—रहने दो बच्चे, मैं समझ गई ....

बच्चा—नहीं, नहीं मैं और भी सीख चुका हूँ। मैं ऐसी कुर्सी बनाने में लगा हूँ जो बैठते ही मनचाही दिशा में पहुँचा दे।

स्त्री—रहने दीजिए, मैं समझ गई, समझ गई। धन्य हैं आपके शिक्षक जिन्होंने ऐसे छोटे-से बच्चों में इतना ज्ञान भर दिया है।

बच्चा—शिक्षक ? शिक्षक किसे कहते हैं ?

स्त्री—तो उन्हें आप क्या कहते हैं ?

शिक्षक—श्रीमती जी, हमारे यहाँ शिक्षक नहीं होते ! शिक्षक वह है, जैसा आपने कहा है, जो बच्चों में ज्ञान भरे। बच्चों में ज्ञान भरने का पेशा हमारे यहाँ नहीं रह गया है। हमें बच्चों में जो ज्ञान निहित है, उसे उभाड़ना भर है। इसलिए जो लोग उन्हें इस कर्म में सहायता पहुँचाते हैं, वे शिक्षक नहीं कहला कर शिक्षा-सहायक कहलाते हैं। शिक्षक शब्द हमने जानबूझ कर छोड़ दिया है क्योंकि सहायक शब्द से बच्चे सदा यह अनुभव करते हैं कि उन्हें स्वयं शिक्षित होना है। हमारा काम सिर्फ सहायता देना है उन्हें।

(संगीत का स्वर)

पुरुष—यह नया पाठ प्रारम्भ हो रहा है, अब मैं जा सकता हूँ ?

स्त्री—शिक्षण में भी आपने संगीत को प्रमुखता दे रखी है !

शिक्षक—श्रम के साथ संगीत और संगीत के साथ शिक्षण—शिक्षण और श्रम को जोड़ने वाली कड़ी तो संगीत ही है न ? संगीत को बन्द कर दीजिए, श्रम और शिक्षण दोनों नीरस, शुष्क और उकताने वाले, ऊबाने वाले बन जायेंगे ।

स्त्री—आपके यहाँ सब कुछ विचित्र है ।

पंचम दृश्य

(एक अनहद संगीत : वंशी का स्वर : कोयल की कूक)

पुरुष—आप हमें किस मायापुरी में लिये जा रहे हैं ?

स्त्री—हाँ, यह मायापुरी ही तो है, चारों ओर लहराते हुए खे[illegible] कहीं फल-फूल; कहीं बालियाँ ! बीच-बीच में बगीचे—कहीं बौरों से [illegible] कहीं फलों से लदे । हवा पराग से बोझिली । फिर यह अनहद संगीत [illegible] अहा !

पथ प्रदर्शक—ओहो, आप कवि भी हैं । हाँ, हर स्त्री कुछ कवि [illegible] है ! किन्तु यह मायापुरी नहीं, यह तो मायापुरी का पड़ोस है, मायापु[illegible] देखिए, वहाँ है ।

पुरुष—वह तो कोई नगर-सा है ? कौन सा नगर है ?

स्त्री—किन्तु आप तो हमें गाँव दिखलाने ले आये थे न ?

पथ प्रदर्शक—वह गाँव ही तो है !

पुरुष—गाँव है ? जहाँ के मकान यहीं से यों चमक रहे हैं, शा[illegible] नमूने का गाँव बसाया है आपने ।

पथ-प्रदर्शक—नहीं, हमारे सारे गाँव ऐसे ही हैं । बहुत दिनों [illegible] है । हमारे बापू की एक शिष्या थीं—विलायत की । उन्होंने भार[illegible] — लिखा था कि जब रास्ता पकड़ कर मैं चलती हूँ और दुर्गन्[illegible]

देखने लगती है, तो मैं समझती हूं, मैं गांव के निकट आ गई। काश, वह देवी प्राज होती! खैर, वह न सही, आप तो हैं। कहिये, आपकी नाक तो नहीं फट रही!

स्त्री—मेरे तो नाक, कान, और प्राण सब तृप्त हुए जा रहे हैं, चलिए, हम जरा आपके गांव को निकट से देखें।

पुरुष—क्या सचमुच ये गांव हैं! पंक्तियों मे बने ये सुन्दर-सुन्दर मकान! बीच-बीच मे पतली, सुथरी पगडंडियां ... हर घर के सामने रंग-बिरंगी फुलवारियां और, यह शायद बिजली भी ...

पथ प्रदर्शक—हां, हां, बिजली ही तो है। बिजली खेतों को पटाती है, जोतती है, घरों को जगमग करती है और चौके-घर से सारी मनहूसियत को दूर रखती है! यह बिजली की कृपा है, जिसने हमारे शहरों और गांव के भेद-भाव को सदा के लिए दूर कर दिया है!

पुरुष—किन्तु गांधीजी तो ग्राम-उद्योगों के पक्षपाती थे न? फिर ये वैज्ञानिक साधन.......

पथ-प्रदर्शक—ग्राम-उद्योग का पक्षपाती होने का अर्थ क्या वैज्ञानिक साधनों से असहयोग करना है? बापू ने रेल, मोटर, रेडियो, प्रेस सबका प्रयोग कि... था। जहां विज्ञान मानवता को पीसता है, हम उसे दूर रखते ... ने विशाल उद्योगों के एकाधिकार से हटाकर ग्राम-उद्योगों ... उसने हमें स्वावलम्बी बनने मे प्रचुर सहायता की है। बापू ... स्वावलम्ब ... हर व्यक्ति स्वावलम्बी हो, हर कुटुम्ब स्वाव-... ...र हो सारा राष्ट्र स्वावलम्बी।

... की घर्र-घर्र आवाज)

स्त्री—...

... के घरों मे आज भी चर्खे चलाये जाते हैं?

...थ-प्रदर्श... ...तो हम कभी ...सकते हैं? जिसने हमें ...राया ...दे... ... भूल जाना तो अपने

इतिहास को, परिहास को भूल जाता है। फिर बापू कहा करते थे, चर्खा ग्रामोद्योग संगठन की धुरी है। धुरी को छोड़ दें, तो गाड़ी चलेगी क्या ?

पुरुष—किन्तु चर्खा तो पुरातन-पंथिता का प्रतीक है।

पथ-प्रदर्शक—हमारे नये चर्खे को देखिए,तो कहिये। बापू ने अठारहवीं सदी के चर्खे को बीसवीं सदी के योग्य बनाया, हमने उसे इक्कीसवीं सदी योग्य बना दिया है। हमारा एक चर्खा पूरे परिवार को अन्न-स्वावलम्बी ब
देता है। हम बापू के सपूत हैं न ?

(लड़कियों के हँसने की आवाज)

स्त्री—ओहो, इधर लड़कियां आ रही हैं। कितनी सुन्दर ?

पुरुष—तितलियों जैसी—

पथ-प्रदर्शक—हाँ, रूप में तितलियां, किन्तु काम में मधुमक्खि
हमारी स्त्रियां युगों से घरेलू कामों पर एकाधिकार रखती आई हैं, अब
कृषि आदि उद्योगों में भी हमारा हाथ बँटाती हैं !

पुरुष—तब तो आपके यहां भी स्त्री-पुरुष में संघर्ष होगा !

पथ-प्रदर्शक—जी नहीं। जहां अधिकार की बात होती है, वहां
यहां तो कर्तव्य की बात है। हमारे शास्त्रों ने स्त्री को पुरुष की अर्द्धांगि
है—सामाजिक और पारिवारिक कर्मों का आधा बोझ अपने ऊप
उन्होंने उसे सार्थक बना दिया है। हमारी नारियों का आदर्श माता
हैं—इसे आप न भूलें।

स्त्री—पूज्य बा ! वह तो संसार की नारियों के लिए स
रहेगी।

पुरुष—हां, एक बात ! आपके यहां कुछ लोग जो हरिज
थे, गांव में उनकी बस्ती किस तरफ है ? जरा उधर तो चलिये ?

पथ-प्रदर्शक—ह-ह-ह ! आप सुदूर भूत की बात कर रहे
कहा था—हमें एक वर्गहीन-वर्णहीन समाज बनाना है !
ही समाज बना लिया है—हमारे यहां न कोई धनी है, न को
कोई कुलीन है, न कोई अन्त्यज ! सब एक साथ रहे, सब एक

करें और एक साथ राष्ट्र को बलवान बनायें— इस प्राचीन आदर्श को हमने नये साँचे में ढाल दिया है। देखते नहीं गाँव के सारे घर एक से हैं। गाँव के घर ही एक-से नहीं हैं, हमारे हृदय भी एक हो चुके हैं।

(दूर से मृदंग झाँझ आदि का स्वर)

स्त्री—यह ? कोई उत्सव हो रहा है क्या ?

पथ-प्रदर्शक—हमारा हर दिन उत्सव का दिन है। उत्सव से हम दिन का प्रारम्भ करते हैं और उत्सव से ही दिन की समाप्ति होती है। सन्ध्या होने को आई न ! अब 'जन-गृह' में गाँव के स्त्री-पुरुष, वृद्ध-बच्चे सब के-सब एकत्र होंगे। वहाँ नृत्य होगा, गान होगा, नाटक होंगे, प्रहसन होंगे। रेडियो लगा है, देश-देश की वार्त्ताएँ सुनी जायेंगी—फिर लोग खुशी-खुशी अपने घर जायेंगे और सुख की नींद सोयेंगे।

पुरुष—कितना सुखी समाज बना रखा है आप लोगों ने !

स्त्री—सचमुच, मायापुरी बनाई है आपने। मेरी तो इच्छा होती है, यहीं बस जाऊँ !

पथ-प्रदर्शक—आप दोनों अपनी बात कह गये—पुरुष प्रतिस्पर्द्धी होता है, नारी आत्म-समर्पिणी ! किन्तु हम कहेंगे, आप जाइये और अपने देश में बापू के इस राम-राज्य का सन्देश दीजिए।

पुरुष—अब हम वापस जाना चाहते हैं, क्या अपने राष्ट्रपति के दर्शन हमें करा सकेंगे आप ?

पथ-प्रदर्शक—राष्ट्रपति ? राष्ट्रपति हमारे देश में अब नहीं होते। पति शब्द में प्रभुत्व सूचित होता है। हमने उसके बदले, प्रमुख राष्ट्रसेवक शब्द रखा है। आप उनसे अवश्य मिलें। मिलकर आप प्रसन्न हो जायेंगे।

स्त्री—कौन-से वह सौभाग्यशाली सज्जन हैं, जिन्हें ऐसे राष्ट्र का प्रमुख सेवक होने का गौरव प्राप्त है ?

पथ-प्रदर्शक—जिस दिन बापू का भौतिक बलिदान हुआ, उसके ठीक एक दिन पहले उन्होंने प्रवचन किया था कि मैं [illegible]

गाँव में हल जोतने वाला व्यक्ति राष्ट्र के राज्य-सिंहासन पर बैठे। एक वैसे ही सज्जन हमारे प्रमुख राष्ट्रसेवक हैं—और उन्होंने बापू की छत्र-छाया में काम भी किया था।

स्त्री—अरे, तो उनकी क्या उम्र है ?

पथ-प्रदर्शक—यही १२० वर्ष के लगभग। बापू की इच्छा थी, वह १२० साल जीयें। वह तो चल बसे, किन्तु उम्र की यह धरोहर हमें दे गये हैं। हमारे प्रमुख राष्ट्रसेवक उनकी इच्छा की पूर्ति कर सके हैं, यह हमारे लिए सौभाग्य की ही बात है।

पुरुष—एक हल जोतने वाला व्यक्ति इस सर्वोच्च पद पर कैसे पहुँचेगा ? क्या आपके यहाँ उम्मीदवारों में प्रतिद्वन्द्विता नहीं होती ?

पथ-प्रदर्शक—हमारे यहां चुनाव में कोई उम्मीदवार नहीं होता। बापू क्या कभी किसी पद के उम्मीदवार हुए ? तो भी वह हमारे सब कुछ थे। हमने वही पद्धति ली है। बापू की जयन्ती-दिवस को हम उत्सव मना कर लौटते हैं, तो इस पद के लिए किसी एक के लिए अपना मत डाल कर। मत पाने के लिए कोई प्रचार करना तो हमारे यहाँ शिष्टता के प्रतिकूल समझा जाता है और हमारे राष्ट्र में कोई अशिष्ट नहीं, यह हमारा दावा है।

स्त्री—सब कुछ विचित्र है आपके देश में। चलिए, हम उनके दर्शन कर लें।

षष्ठम दृश्य

(मोटर के भोंपू का शब्द)

स्त्री—नमस्कार !

पुरुष—नमस्कार !

राष्ट्रसेवक—नमस्कार देवी जी, नमस्कार महोदय ! आइये पधारिये। ....तो देख लिया आपने हमारे बापू के राम-राज्य को !

पुरुष—देख लिया, प्रसन्न हुआ !

पुरुष—हाँ, वह तो संसार भर के लिए एक दुःखद घटना हुई थ
गांधीजी ऐसे सन्त को गोली से मारा जाना। लेकिन, क्षमा कीजिए, तो पूछ

राष्ट्रसेवक—क्षमा ! आप क्या कह रहे हैं यह ? आप सब-कुछ
सकते हैं।

पुरुष—क्या धर्म का भेद-भाव....

राष्ट्रसेवक—बस, बस, बस, रहने दीजिए। धर्म का भेद-भाव तो
के रक्त से ही धुल गया। हाँ, जो उसका धब्बा-सा बच गया था, उसे भी ह
दूर कर लिया—यद्यपि उसमें प्रयत्न काफी करने पड़े। अब हमारे
विश्वासों की विभिन्नता, विचारों की विभिन्नता उसी तरह स्वाभाविक मा
जाती है, जैसी मुखाकृति की विभिन्नता। किसी दो के चेहरे एक हैं ?
हृदय और मस्तिष्क कैसे एक-से होंगे। किन्तु अलग-अलग चेहरे रखकर भी ह
सभी मानव हैं, कुटुम्बी हैं, बाप हैं, भाई हैं, पति हैं, पत्नि हैं, बहिन हैं, बेटी
एक-साथ रहते हैं, आनन्द मनाते हैं। उसी तरह अलग विश्वास और विच
रखकर भी हमें परस्पर प्रेम और आनन्द से रह सकते हैं, रहते हैं।

पुरुष—धन्य हैं आप और धन्य है आपका देश जहाँ एक ऐसा समा
प्रस्फुटित हुआ है, जो संसार के लिए अनुकरणीय है।

राष्ट्रसेवक—धन्य न हम हैं न हमारा देश है। धन्य हैं बापू, जिन
चरणों का अनुसरण कर हम यहाँ पहुँचे हैं।

स्त्री—मैं तो अपने भाई-बहिनों से कहूँगी, बापू का पथ ही विश्व
कल्याण का पथ है - हमें उसी ओर बढ़ना चाहिए। जहां मानव मानव
भेद नष्ट हो चुका हो, जहां श्रम के साथ संगीत जुड़ा हो और संगीत के सा
शिक्षण, जहां बच्चे फूल की तरह स्वतः प्रस्फुटित होते हों और नारिय
तितलियों की तरह सुन्दरता रखकर मधुमक्खियों की तरह संचयशील हों, औ
सबसे बढ़कर जहां शस्त्र बर्बरता के चिन्ह माने जाते हों और शासन व्यक्ति
के लिए बन्धन, भला वह समाज अनुकरणीय न होगा, तो और कौन-स
होगा।

राष्ट्रसेवक—आप तो कविता करने लगीं ।

स्त्री—सत्य कविता का स्वप्न है । जिन्होंने इतने बड़े सत्य का स्वप्न देखा, क्या उन बापू से बढ़कर भी कोई कवि होगा ।

राष्ट्रसेवक—बापू ! तुम्हें नमस्कार है, बापू !

पुरुष—अपने देश की ओर से हम भी उनकी स्मृति में सर झुकाते

स्त्री—नमस्कार बापू ।

पुरुष—तो हमें विदा की आज्ञा दीजिए ।

राष्ट्रसेवक—आप दोनों का पथ मंगलमय हो !

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. गाँधीजी के रामराज्य की मुख्य विशेषताओं का वर्णन अपने शब्दों में कीजिये ।

२. 'रामराज्य' की जिन व्यवस्थाओं का वर्णन श्री बेनीपुरी ने अपनी रचना में किया है, क्या वे आधुनिक भारत की समस्याओं का सही समाधान प्रस्तुत करती हैं ? इस विषय में तर्कपूर्ण उत्तर दीजिये ।

३. फीचर की रचना विधि पर संक्षेप में प्रकाश डालिए ।

४. रामराज्य की मुख्य विशेषता है
   (क) हिंसा का पूर्ण त्याग ।
   (ख) समाज में समानता की स्थापना ।
   (ग) औद्योगिक विकास ।
   (घ) शिक्षा की उत्तम व्यवस्था ।
   सही विकल्प के आगे √ का निशान लगाइये ।

चित्रकार लियोनार्दो दा विंची का वैज्ञानिक रू

[जीवनी साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है, यद्यपि हिन्दी के सा
त्यिक क्षेत्रों में अभी तक इसको ज्यादा महत्व नहीं दिया जाता है। जीव
की प्रथम विशेषता है—वर्णित घटनाओं की प्रामाणिकता। जीवनी में के
प्रामाणिक घटनाओं का ही वर्णन होता है, कल्पना के लिए उसमें स्थान न
होता। कहानी का लेखक जिस रोचकता की सृष्टि अपनी कल्पना के द्वा
कर सकता है, जीवनी के लेखकों को उसके लिए अपनी रचना-शैली पर नि
रहना होता है। घटनाओं की प्रामाणिकता के साथ शैली की रोचकता
प्रभविष्णुता ही जीवनी की सफलता का कसौटी है।

प्रस्तुत रचना में अद्भुत प्रतिभाशाली और महान् वैज्ञानिक लियोना
दा विंची के जीवन और उसके आविष्कारों पर रोचक शैली में प्रकाश डा
गया है। लियोनार्दो दा विंची का समय १५वीं शताब्दी है किन्तु अपने अने
कार्यों में वे २०वीं शताब्दी के प्रतीत होते हैं। वे अपने युग के तो स
महान् पुरुष थे ही, मानव जाति के सारे इतिहास में भी उनकी जैसी मह
प्रतिभा वाले पुरुष बहुत कम हुए हैं। वे वैज्ञानिक के साथ कलाकार, चित्रका
डाक्टर और संगीतज्ञ भी थे। उनकी प्रतिभा ने एक साथ अनेक क्षेत्रों
आलोकित किया था।]

फ्लॉरेंस (इटली) में एक पहाड़ी है। एक दिन यहाँ सुनहरे बालों वा
एक नौजवान आया जिसके हाथ में एक पिंजरा था। पिंजरे को उसने खो
और पिंजरे में बंद परिन्दों को आसमान में छोड़ दिया। परिन्दे खुली हवा
तैरने गए। हमारा नौजवान उन्हें बड़े ध्यान से देखता रहा। जो कुछ उस
देखा उसके वह नोट्स लेता गया।

हो चुका था कि हवा मे उड़ने के जो कुछ भी नियम हो सकते हैं वे आदमी के लिए और परिन्दों के लिए एक-से ही होने चाहिए । वह अपने नोट्स उल्टी लिखावट मे ले रहा था कि कहीं किसी और के हाथ न आ जाएँ । इटली मे पहले से ही बहुतों का ख्याल बन चुका था कि लियोनार्दो पागल है और लियोनार्दो नहीं चाहता था कि वह किसी तरह भी जले पर नमक छिड़कने की एक गलती और कर जाए । आदमी उड़ने लगे—? नामुमकिन ।

कितने ही इतिहासकारों का मत है कि लियोनार्दो दा विंची अपने युग का सबसे बड़ा परीक्षणशील वैज्ञानिक था, और यह तो सभी मानते ही हैं कि उसकी गणना मानव-इतिहास के श्रेष्ठतम कलाकारों मे होनी चाहिए । चित्र-कला में उसकी इस प्रसिद्धि का आधार दो चित्र माने जाते हैं—'लास्ट-सपर' और 'मोनालीसा' । कितने ही विश्वविख्यात चित्र वह अपने पीछे छोड़ गया है और, इनके अतिरिक्त, ५००० से अधिक बड़े छोटे-छोटे अक्षरों मे लिखे हुए सचित्र पृष्ठ भी जिनमे जो कुछ प्रत्यक्ष उसने किया और उन प्रत्यक्षों के आधार पर जितने भी आविष्कार (सभी तरह के) उसे सूझे, उनकी रूपरेखा अंकित है । जो कुछ भी उसने जिन्दगी-भर मे लिखा, शीशे पर अक्स की शक्ल मे उल्टी लिखावट मे ही लिखा ताकि वह लोगों की निगाह से बचा रह सके । लियोनार्दो दा विंची एक आविष्कारक था । वह एक सिविल इंजीनियर, सैनिक इंजीनियर, ज्योतिर्विद, भूगर्भ-शास्त्री और शरीर-शास्त्री भी था । और साथ ही, शायद, वह दुनिया का पहला हवाबाज भी था । उसका हर क्षेत्र मे, प्रवेश ही नहीं, एक विशेषज्ञ के समान पूर्ण अधिकार था । सर्वप्रथम वह एक कलाकार था, और कला के माध्यम से ही उसने विज्ञान मे प्रवेश किया, और उसके वैज्ञानिक अध्ययनों ने सम्भवतः उसकी कला को चार चाँद और लगा दिए ।

लियोनार्दो का जन्म १४५२ मे, इटली के प्रसिद्ध शहर फ्लॉरेंस के निकट विंची गाँव मे हुआ था । उसका पिता गाँव का एक अफसर था, और माँ विंची की ही किसी सराय मे कभी नौकरानी रही थी । विंची का बचपन अपने दादा के घर मे बीता ।

चित्रकार लियोनार्डो दा विंची का वैज्ञानिक दृ...

[जीवनी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा है, यद्यपि हिन्दी के ... [illegible] क्षेत्रों में अभी तक इसको उतना महत्त्व नहीं दिया जाता है। जीव... की प्रमुख विशेषता है वर्णित घटनाओं की प्रामाणिकता। जीवनी में के... प्रामाणिक घटनाओं का ही वर्णन होता है, कल्पना के लिए उसमें स्थान ... होता। कहानी का लेखक जिस रोचकता की सृष्टि अपनी कल्पना के ... कर सकता है, जीवनी के लेखकों को उसके लिए अपनी रचना शैली पर नि... रहना होता है। घटनाओं की प्रामाणिकता के साथ शैली की रोचकता ... प्रभविष्णुता ही जीवनी की सफलता का कसौटी है।

प्रस्तुत रचना में अद्भुत प्रतिभाशाली और महान् वैज्ञानिक लियोना... दा विंची के जीवन और उनके आविष्कारों पर रोचक शैली में प्रकाश डा... गया है। लियोनार्डो दा विंची का समय १५वीं शताब्दी है किन्तु अपने ... कार्यों से वे २०वीं शताब्दी के प्रतीत होते हैं। वे अपने युग के तो ... महान् पुरुष थे ही, मानव जाति के सारे इतिहास में भी उनकी जैसी मह... प्रतिभा वाले पुरुष बहुत कम हुए हैं। वे वैज्ञानिक के साथ कलाकार, चित्रका... डाक्टर और संगीतज्ञ भी थे। उनकी प्रतिभा ने एक साथ अनेक क्षेत्रों ... आलोकित किया था।]

फ्लोरेंस (इटली) में एक पहाड़ी है। एक दिन वहाँ सुनहरे बालों वा... एक नौजवान आया जिसके हाथ में एक पिंजरा था। पिंजरे को उसने खो... और पिंजरे में बंद परिन्दों को आसमान में छोड़ दिया। परिन्दे खुली हवा ... तैरने लगे। हमारा नौजवान उन्हें बड़े ध्यान से देखता रहा। जो कुछ उस... देखा उसका वह स्केच लेता गया।

हो चुका था कि हवा में उड़ने के जो कुछ भी नियम हो सकते हैं वे आदमी के लिए और परिन्दों के लिए एक-से ही होने चाहिए। वह अपने नोट्स उल्टी लिखावट मे ले रहा था कि कहीं किसी और के हाथ न आ जाएँ। इटली मे पहले से ही बहुतों का ख्याल बन चुका था कि लियोनार्दो पागल है और लियोनार्दो नहीं चाहता था कि वह किसी तरह भी जले पर नमक छिड़कने की एक गलती और कर जाए। आदमी उड़ने लगे—? नामुमकिन।

कितने ही इतिहासकारो का मत है कि लियोनार्दो दा विंची अपने युग का सबसे बड़ा परीक्षणशील वैज्ञानिक था, और यह तो सभी मानते ही हैं कि उसकी गणना मानव-इतिहास के श्रेष्ठतम कलाकारो मे होनी चाहिए। चित्रकला मे उसकी इस प्रसिद्धि का आधार दो चित्र माने जाते हैं—'लास्ट-सपर' और 'मोनालीसा'। कितने ही विश्वविख्यात चित्र वह अपने पीछे छोड़ गया है और, इनके अतिरिक्त, ५००० से अधिक बड़े छोटे-छोटे अक्षरो मे लिखे हुए सचित्र पृष्ठ भी जिनमे जो कुछ प्रत्यक्ष उसने किया और उन प्रत्यक्षों के आधार पर जितने भी आविष्कार (सभी तरह के) उसे सूझे, उनकी रूपरेखा अंकित है। जो कुछ भी उसने जिन्दगी-भर मे लिखा, शीशे पर अक्स की शक्ल मे उल्टी लिखावट मे ही लिखा ताकि वह लोगो की निगाह से बचा रह सके। लियोनार्दो दा विंची एक आविष्कारक था। वह एक सिविल इंजीनियर, सैनिक इंजीनियर, ज्योतिर्विद, भूगर्भ-शास्त्री और शरीर-शास्त्री भी था। और साथ ही, शायद, वह दुनिया का पहला हवाबाज भी था। उसका हर क्षेत्र मे, प्रवेश ही नही, एक विशेषज्ञ के समान पूर्ण अधिकार था। सर्वप्रथम वह एक कलाकार था, और कला के माध्यम से ही उसने विज्ञान मे प्रवेश किया, और उसके वैज्ञानिक अध्ययनो ने सम्भवतः उसकी कला को चार चाँद और लगा दिए।

लियोनार्दो का जन्म १४५२ मे, इटली के प्रसिद्ध शहर फ्लॉरेंस के नजदीकी गाँव मे हुआ था। उसका पिता गाँव का एक अफसर था, और ...ी ही किसी सराय मे कभी नौकरानी रही थी। विंची का बचपन ... मे बीता।

स्कूल में ही लियोनार्दो की प्रतिभा सामने आने लग गई थी जब
गणित की मुश्किल से मुश्किल समस्याओं का समाधान वह चुटकियों में
देता था। और इसी समय से ही चित्रकला में उसकी अद्भुत शक्ति भी प्र
स्फुटित पाने लगी थी। सोलह साल की उम्र में आन्द्रेया देल वेरोंकियो
यहाँ वह एप्रेंटिस हो गया और उसकी छत्रछाया में लकड़ी, संगमरमर त
अन्याय धातुओं पर शिल्पकारी करना सीख गया। वेरोंकियो अपने शि
की अद्भुत योग्यता से बहुत प्रभावित हुआ और उसने लियोनार्दो को प्रे
किया कि वह लेटिन और ग्रीक के गौरव-ग्रंथों का स्वाध्याय करे और दर्श
गणित तथा शरीर-विज्ञान में दक्षता प्राप्त करे। वेरोंकियो का विचार
कि एक सच्चा कलाकार बनने के लिए इन ग्रंथों और विषयों का स्वाध्या
आवश्यक है।

छब्बीस वर्ष की आयु में लियोनार्दो की यह शागिर्दी समाप्त हुई
जिसके बाद वह 'कलाकार संघ' का सदस्य बन गया। अब वह पूर्णत
स्वतन्त्र था कि उसकी कला के भी अपने प्रशासक हों, अपने ही पारखी हों
संघ की छत्रछाया में उसने संगीत-वाद्यों में एक नया परीक्षण किया। घोड़े के
सिर की शक्ल में एक वीणा आविष्कृत की जिसके तारों में यह विशेषत
थी कि वे संगीत के स्वरों का यथेष्ट 'सकलन' कर सकते थे। इस वीणा से
ड्यूक लूदोविको स्फोर्ज़ा, जो उन दिनों मीलान का राजा था, लियोनार्दो की
ओर आकृष्ट हो गया।

इटली उन दिनों कितनी ही छोटी-छोटी रियासतों में बँटा हुआ
था, जिनमें आये दिन कोई न कोई झड़प हो जाती। लियोनार्दो का चिन्त
का ध्यान परिणामतः युद्ध के लिए उपयोगी सामग्री के निर्माण की ओर
गया। ड्यूक की नौकरी करते हुए उसने कुछ नये शहर बसाने की योजना
भी बनाई ताकि प्लेग की महामारी से तंग आये शहरों को वह कुछ मुक्ति
दिला सके। उसकी योजनाओं में शहर की गन्दगी को नालियों द्वारा दूर ले
जाने की व्यवस्था का महत्त्व स्पष्ट है। कितनी ही योजनाएँ उसने ड्यूक
के सामने पेश की लेकिन मालिक को शायद उनमें को

माई, सो, ड्यूक के लिए वह एक सुन्दर चित्र 'दि लास्ट सपर' ही प्रस्तुत कर सका जिसे सान्ता मारिया की रिफेक्टरी को पेश करने के लिए बनाने का हुक्म खुद ड्यूक ने दिया था।

मीलान में रहते हुए उसकी अभिरुचि 'शरीर-रचना विज्ञान' (एनाटमी) में जाग उठी। उस जमाने के मशहूर डाक्टरों के पास वह गया कि मुर्दों की चीरा-फाड़ी वह अपनी आँखों से देख सके। इस सबका नतीजा यह हुआ कि मानव-शरीर के अंग-अंग का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करने वाले लियोनार्दो के कितने ही कलापूर्ण रेखाचित्र आज विज्ञान की विरासत बन चुके हैं।

जब ड्यूक स्फोर्जा को फ्रांस के बादशाह ने पकड़ लिया और कैद में डाल दिया तो लियोनार्दो का कोई अभिभावक न रहा। इस संकटकाल में वेनिस जाकर उसने अपने युद्ध-सम्बन्धी आविष्कारों को वहाँ के अधिकारियों के सम्मुख पेश किया—जिनमें गोताखोरों के लिए एक खास किस्म की पोशाक और एक तरह की पनडुब्बी भी थी। ये ईजादें विंची के उन थोड़े-से आविष्कारों में से हैं जिनका कि उसकी नोट-बुकों में पूरा-पूरा ब्योरा नहीं मिलता। विंची का कहना था कि इन्हें बनाने के तरीकों को वह खोलकर पेश नहीं कर रहा क्योंकि उसे डर था कि "कहीं मनुष्यों की पशुता इनका प्रयोग समुद्र-तल में उतर कर संहार के लिए न करने लगे।"

पुष्ट करने के लिए लियोनार्दो ने सेसारे बोर्गिया के यहाँ नक्शाकशी की नौकरी भी की। बोर्गिया एक जालिम हाकिम था जिसकी तजवीज सारे इटली को अपने कब्जे में ले आने की थी; उसने लियोनार्दो को नौकरी दी भी इसी इरादे से थी कि उसे इस बहाने टस्कनी और अम्ब्रिया के सही-सही नक्शे मिल जाएँगे। ये नक्शे लियोनार्दो ने खुद मौकों पर पहुँच कर, निरीक्षण के अनन्तर, और इंच-इंच जमीन को औजारों से मापकर तैयार किए थे।

१५०० ई० में, जब उसकी आयु ५० के करीब होने लगी, लियोनार्दो अपनी मातृभूमि फ्लॉरेंस लौट आया और ६ साल लगातार वहीं रहा।

इसी घराने में उसने 'मोनालीसा' की वह प्रसिद्ध तस्वीर तैयार की जिसकी सुभावनी मुस्कराहट को फ्रांस के सूव्र म्यूजियम में देखकर, आज भी हजारों आँखों को तरावट मिलती है और आध्यात्मिक तृप्ति मिलती है।

लियोनार्दो के ही समकालीन अन्य प्रसिद्ध कलाकार—रैफल तथा माइकेलेंजेलो—उन्हीं दिनों वैटिकन में, और वैटिकन सिस्टीन के चैपल में तस्वीरें बना रहे थे। लियोनार्दो भी रोम पहुँचा, किन्तु एक भी आर्डर लेने में असफल रहा। लोग लियोनार्दो को नहीं चाहते थे, क्योंकि उसने आदमी के जिस्म को अन्दर से देखा था और—अपने उन अध्ययनों की उसने तस्वीरें भी खींची थीं। जनता की, तथा अधिकारी वर्ग की, इस उपेक्षा का परिणाम यह हुआ कि उसे इटली छोड़ना पड़ा और वह फिर लौटकर घर कभी नहीं आया। उसकी जिन्दगी के बचे आखिरी साल फ्रांस के राजा की सेवा में गुजरे।

कलाकार लियोनार्दो दा विंची के प्रामाणिक संस्करण निकल चुके हैं। आज भी उसके उन चित्रों में मानव-प्रतिमा की अद्‌भुत अभिव्यक्ति प्रत्यक्ष है, किन्तु वैज्ञानिक एवं आविष्कारक लियोनार्दो दा विंची का वर्णन कर सकना कुछ टेढ़ी खीर है। वह अपने जमाने से कहीं आगे था। उसने जितनी भी कल्पनाएँ कीं, सभी को मूर्त-रूप दिया जा सकता था, लेकिन अपने साथियों के सामने वह इतने दूर की सम्भावनाएँ पेश कर रहा था जिसके लिए समर्थन उसे शायद कहीं भी नहीं मिल सका। उसकी एक मुश्किल यह भी थी कि वह एक ही वक्त पर कितने ही काम अपने हाथ में ले लेता और वक्त पर एक भी निभा न पाता क्योंकि वक्त थोड़ा होता, और उन सभी पर एक साथ ध्यान वह खुद भी केन्द्रित नहीं कर सकता था।

उसके आविष्कार, जितने ही रोचक हैं, उतने ही विविध भी हैं। उसकी मशीनगन स्पेनिश-अमेरिकन युद्ध में इस्तेमाल की गई अमेरिकन गैटलिंग गन का पूर्व संस्करण है। लियोनार्दो की गन में एक तिकोने आधार पर रखे बहुत से बैरल इस्तेमाल होते हैं: एक ग्रुप की गनें जब कारतूस छोड़ रही होती हैं तो—दूसरे ग्रुप की भराई हो रही होती है, तो तीसरा ग्रुप ठण्डा हो रहा

ऐसा है। उसका ईजाद किया हुआ लियोनार्दो टैंक एक चलता-फिरता घर है जिसके अन्दर की तोपों को सभी दिशाओं में मोड़ें सिपाही रक्षित होते हैं। इस प्रकार ऐसे पहियों पर चलने वाला जिसे किसी भी दिशा में घुमाया-फिराया जा सके और, जरूरत के वक्त, प्रहार भी किया जा सके, लेकिन टैंक को आगे ठेलने के लिए आदमी ही काम में लाए जाते। यह उन दिनों की बात है जबकि पानी और हवा को शक्ति के रूप में इस्तेमाल करने के अतिरिक्त कोई और कारगर वैज्ञानिक तरीका विकसित नहीं किया जा सका था।

पनडुब्बियों और गोताखोरों की पोशाक के अलावा लियोनार्दो ने एक दो-मस्तूल वाला पानी का जहाज भी बनाया। बाहर के मस्तूल को यदि दुश्मन बमबारी से तबाह कर दे तो भी जहाज बाकायदा चलता रहेगा।

विज्ञान के उस क्षेत्र में भी जिसे आधुनिक परिभाषा में यंत्र-विज्ञान कहते हैं, लियोनार्दो का अच्छा प्रवेश था। हवा की रफ्तार को जानने के लिए उसने एक एनीमोमीटर ईजाद किया। यह एक तरह का पंखा था जिसे बीचों-बीच इस प्रकार से टिका दिया जाता था कि जरा-सी भी हवा उसमें गति उत्पन्न कर जाए; पंखा हवा में जिस कोण पर झुकता है, उससे हवा की रफ्तार बड़ी आसानी से नापी जा सकती है।

प्रामाणिक एवं विपुल संग्रह है। इस कार्पोरेशन के संस्थापक टॉमस जे० वाट्सन के शब्द हैं :—

आविष्कार मनुष्य की महानतम कलाओं में एक है। शब्द के व्यापकतम अर्थ में सभी कलाओं का समावेश आविष्कार में हो जाता है। लियोनार्डो दा विंची का अध्ययन—जब हम उसके चित्रों, रेखाचित्रों, अन्वेषणों, वैज्ञानिक गवेषणाओं तथा आविष्कारों के माध्यम से करते हैं, तो हमें एक अपूर्व उल्लास का अनुभव होता है कि एक ही मनुष्य अपनी विचारशक्ति, अनुभवशक्ति तथा निर्माण-शक्ति का अपने साथी मानवों की सेवा में पूर्णतम प्रयोग करते हुए—क्या कुछ नहीं कर जा सकता है।"

(संकलित)

होते हैं जब कि कुछ दूसरे सूर्य के उदय होते ही अपना मुँह फेर लेते हैं। यह नहीं, लियोनार्दो ने यह भी प्रत्यक्ष किया कि कुछ जड़ों की प्रवृत्ति जमीन के नीचे की ओर बढ़ने की होती है, जब कि दूसरी किस्म की कुछ जड़ें स्वभावत: धरती के बाहर निकलने के लिए जैसे बेचैन रहती हैं। वनस्पतियों में, प्रकार वृत्ति की भांति, यह (एक प्रकार की) 'भूमुखी-वृत्ति' भी पाई जाती है—उ भिन्न-भिन्न वनस्पतियों में प्रवृत्ति अथवा निवृत्ति के रूप में उसी प्रकार दृष्टि गोचर होती है। वृक्षों के तने को या शाखाओं को काटें तो हम देखेंगे कि कटी हुई जगह पर कुछ घेरे से पड़े होते हैं। लियोनार्दो ने इन घेरों का सम्बन्ध वृक्ष की आयु से स्थापित कर लिया। फूलों के जो रेखाचित्र लियोनार्दो पीछे छोड़ गया है, उनसे यह स्पष्ट है कि उसे वनस्पति-जीवन में नर-नारी अथवा स्त्री-पुरुष की सत्ता का परिज्ञान था।

शरीर के अंगांग तथा अन्तरंग जानने की उत्सुकता लियोनार्दो को हुई तो इसके लिए उसने एक चिकित्सक के साथ अपना गठबन्धन कर लिया। जहाँ तक मानव-शरीर की रचना का प्रश्न है, उसकी अन्तर्व्यवस्था का लियोनार्दो को गम्भीर ज्ञान था। यह उसके शरीर विषयक रेखाचित्रों से ही स्पष्ट है। इन रेखाचित्रों से यह भी इतिहास में पहली ही बार जाहिर हो सका कि मनुष्य के मस्तक में तथा जबड़ों में मुखद्वार होते हैं जिन्हें चिकित्साशास्त्री क्रमश: 'फ्रन्टल' तथा 'मैक्सिलरी साइनस' कहते हैं। चिकित्साशास्त्र में लियोनार्दो के रेखाचित्र ही पहली बार रीढ़ के दोहरे झुकाव को ठीक तरह से अंकित कर सके हैं; और, इतिहास में, पहली बार लियोनार्दो के रेखाचित्रों में ही मां के पेट में पड़े (अ-जात) शिशु की स्थिति बड़ी सूक्ष्मता के साथ दरशाई गई है। लियोनार्दो के हृदय-सम्बन्धी रेखाचित्रों तथा उपवर्णनों में भी अद्भुद यथार्थ अंकित हुआ है जिसमें—हृदयकक्ष, हृदयद्वार तथा हृदय की आपूर्ण रचना सभी कुछ यथावत् चित्रित है।

लियोनार्दो के अनेक रेखाचित्रों को आज के माडलों के रूप में परिवर्तित किया जा चुका है। कभी-कभी इन प्रतिमूर्त आकृतियों का प्रदर्शन भी किया जाता है 'इण्टर नेशनल बिज़नेस मशीन कॉर्पोरेशन' के पास इनका एक

खाए-पिए दफ्तर चले जाते, दिनभर व्रत रखते, मेरी माताजी भी रखती। जब सन्ध्या को दफ्तर से लौटते—शुक्लजी ने उन्हें अपने लेन-देन वाले अतिरिक्त-कार्य से थोड़े दिनों के लिए छुट्टी दे दी थी—तब कई घण्टे पति-पत्नी गाँठ जोड़कर परिवार के पुरोहित से हरिवंश पुराण की कथा सुनते, 'पुत्रपद सन्तान गोपालमंत्र' की पूजा करते—

'देवकी सुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते
देहि मे तनय कृष्ण त्वामहं शरणं गत.'

श्लोक का १०८ जाप करते और तत्पश्चात् आधीरात को पारायण करते। पुरोहितजी ने कथा सुनाने और पूजा कराने के लिए एक हजार एक रुपये की दक्षिणा मांगी थी। पिताजी के पास इतना धन एक साथ देने की समाई नहीं थी। अनुष्ठान की समाप्ति पर उन्होंने एक पुर्जे पर धनराशि लिखकर पुरोहितजी को समर्पित करदी और प्रतिमास दस रुपया उनको देते रहे। जब मैं आठ-नौ वर्ष का हो गया तब जाकर पिताजी इस सकल्प-ऋण से उऋण हुए।

पंडितों ने दानादि में कुछ ऐंठने की गरज से मेरे जन्म पर किंचित् चिंतित मुद्रा बनाकर घोषित किया कि लड़का तो मूल नक्षत्र में पैदा हुआ है। कहा जाता है कि मूल नक्षत्र में जन्मा पुत्र पिता के लिए घातक होता है। पंडितों ने उस कुप्रभाव के निराकरण के उपाय भी निकाल लिये हैं। मेरे पिता ने अपने ज्योतिष के यत्किंचित ज्ञान से यह सिद्ध कर दिया कि मैं मूल नक्षत्र में नहीं पैदा हुआ। शायद हुआ ही हूँ। जन्म का बिल्कुल ठीक समय कौन देखता है, घड़ियाँ भी कहाँ ठीक होती हैं। सुनते हैं कुछ पलों के अन्तर से भी ग्रहों में अन्तर पड़ जाता है। लोकानुभव ने मूल नक्षत्र में जन्मे—मुलहे—का एक दूसरा प्रभाव देखा है कि वह उपद्रवी अथवा उत्पाती होता है—मुरहा, और जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, शायद, ज्योतिष विद्या से लोकानुभव अधिक सच्चा साबित हुआ है। पितृ-घातक तो मैं नहीं हुआ, पर मुरहाई मैंने कम नहीं की और न जाने कितनी बार मेरे नाते-रिश्तेदारों ने, शायद ठीक ही, मुझे मुरहा कहा। जब मुझे शब्दों की कुछ समझ आई और मैं थोड़ा बहुत उनमें

बचपन की यादें

(ले० हरिवंशराय 'बच्चन')

[आत्मकथा अपनी कहानी है अर्थात् स्वयं द्वारा लिखित जीवनी आत्मकथा में वर्णित घटनाओं की प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध होती है क्योंकि यहाँ नायक स्वयं अपने जीवन की घटनाओं पर प्रकाश डालता है। जीवनी लिखने की तुलना में आत्मकथा का लेखन अधिक कठिन कार्य है क्योंकि यहाँ लेखक ही रचना का विषय होता है। अपने बारे में तटस्थ होकर लिखना सहज कार्य नहीं है। आत्म-कथा लिखने वालों की संख्या इसलिए हमेशा थोड़ी रही है।

प्रस्तुत रचना श्री हरिवंशराय बच्चन की सद्य प्रकाशित आत्मकथा 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' का एक अंश है। इस अंश में कवि ने अपने बचपन की कुछ स्मृतियों का वर्णन किया है। ये अंश कवि के बचपन पर तो प्रकाश डालते ही हैं, हमारे समाज के कलंक, अछूत प्रथा के प्रति कवि की तीव्र भावना पर भी प्रकाश डालते हैं। हमारे लोक जीवन में हिन्दू और मुसलमान धर्मों के विश्वास किस प्रकार घुलमिल कर एक हो गये थे यह भी इस रचना से जाना जा सकता है।]

कौतुक करने लगा तो मेरे 'सुमन' का एक और ही अर्थ निराला। ह
'सुमन' स्वभाव में सचमुच पैदा हुआ हूँगा, तभी तो जीवन और सृजन दोनों
में कुछ 'मौलिक' करने की ओर मेरा आग्रह रहा है।

मैं गाऊँ तो मेरा कंठ—
स्वर न मिले औरों के स्वर से
जीऊँ तो मेरे जीवन की औरों से हो अलग रवानी

अतीत की ओर देखता हूँ तो पाता हूँ कि इस अर्थ में 'सुमन' नाम
मुझ पर कम असर नहीं रहा। पिताजी नाहक परेशान थे। बहरहाल,
पंडितों ने देखा कि मेरे पिताजी भी ज्योतिष में कुछ दखल रखते हैं तो उ
द्वारा जन्म-पत्र प्रस्तुत किया और उसमें, शायद मेरे पिताजी को खुश
के लिए, कई उच्च ग्रह डाल दिये। मेरा जन्म-पत्र है—मुझे ज्योतिष का
क, ख, भी नहीं मालूम—अच्छा-बुरा जैसा, उसी समय-कुसमय मेरी म
और अब मेरी पत्नी ज्योतिषियों को दिखलाकर और उनकी गणना के अनु
ग्रह-दशा का प्रभाव सुनकर आशंकित, आश्वस्त, संतुष्ट अथवा प्रफुल्ल
रही हैं। कौतूहलवश कभी-कभी मैंने भी उनकी भविष्यवाणियाँ सुनी हैं,
अर्द्ध-सन्देह से, कभी अर्द्ध-विश्वास से, क्योंकि कभी-कभी उनकी बताई
किसी अंश में सच भी निकली हैं। तेजो जी (मेरी पत्नी) मेरे बारे में
अच्छी बातों में विश्वास करने के लिए बड़ी जल्दी तैयार हो जाती हैं, पर
सम्बन्ध में शायद मेरी माताजी का दृष्टिकोण अधिक व्यावहारिक था
कहती थीं 'जब रानी का भाग जगता है तो उनको नौलखाहार मिलता है
ब नौकरानी का, तब उसे तिलरी मिलती है—कच्चे मोतियों की तीन
ी माला'।

मेरे होने और जीने के लिए मेरी माता ने और भी बहुत से
पाय टोटके टामक आदि किये। वे सहज-विश्वासी थीं। जो भी उनसे
हता, उसको वे मानने के लिए तुरन्त तैयार हो जातीं। अपने घर में
ी बीमारी-बीमारी में वे वैद्य-हकीम की दवा के साथ, खरखोदवा, ओझ
झाड़-फूँक सभी कुछ एक साथ करातीं-कुछ न कुछ तो लगेगा ही। मेरे

एक रस्म किसी-सी नहीं है कि उससे कोई छूट जाए, जैसे छूट जाए तो अपशगुन उसी का समझा जायेगा। मुझे नहला-धुलाकर नये कपड़े पहना आसन में लाया गया है और मुझ से कहा गया है टोकरियों को लात मारूँ। परिपाटी यह थी कि जो अन्न भूमि पर गिर जाता था, वह चमारिन का होता था, शेष अन्न परजावर्ग का। ब्राह्मण देवता को तो थाली में सीधा सजाकर समर्पित किया जाता था। जब मैं टोकरियों को ठोकर लगाने को आगे बढ़ता हूँ तो चम्मा खिलखिला उठी है, 'और से मार, मोरे राजा बेटा, जोरन सउर जोर से।' जब मैं छोटा हूँगा तो पता नहीं मेरे पाँवों में कितनी ताकत होगी और कितना अन्न बेचारी चम्मा को मिलता होगा, पर जब मैं कुछ बड़ा हुआ—तो कुछ शरारतन, कुछ चम्मा के प्रति सहज-अनजान सहानुभूति से मैं लगभग पूरी टोकरियाँ अपनी ठोकरों से उलट देता था और चम्मा अपनी पुरानी धोती फैलाकर अन्न बटोरती, मुझ पर आशीष बिखेरती—कुछ शब्दों, अधिक अपने नेत्रों से, चली जाती थी। हिन्दू समाज ने जन-जन के बीच ऊँच-नीच का कटुबोध कराने के लिए कैसे-कैसे अजीब तरीके निकाले हैं। मुझे याद नहीं कब मैंने ठोकर मारकर अन्नदान करने से इन्कार कर दिया और वर्ष गाँठ पर मेरा तुलादान किया जाने लगा। लकड़ी की टाल से बड़ी सी तराजू आती, उसे तीन बल्लियों के सहारे लटकाया जाता, आम के पल्लवों और गेंदा के फूलों से सजाया जाता और मुझे किसी वर्ष अन्न से, किसी वर्ष फल, किसी वर्ष मिठाई से तोला जाता—मुझ से तीन साल छोटे मेरे भाई शालिग्राम भी साथ पलड़े पर बैठने को मचलते—जैसे दूल्हे के साथ शहबाला, और तोल पर चढ़ी सामग्री परजा-पवन, भिखारियों को बाँट दी जाती।

चम्मा की मृत्यु मेरे लड़कपन में ही हो गई थी। वह बीमार पड़ी और उसकी बीमारी बढ़ती ही गई तो उसने इच्छा प्रकट की कि अन्त समय पर मेरे हाथों से ही उसके मुँह में तुलसी-गंगाजल डाला जाये। मुझे इस कार्य के लिए कोई लिवा ले गया और चम्मा के पीले चेहरे और डूबती आँखों को देखकर मुझे बड़ा डर लगा। दूसरे दिन चम्मा की अर्थी उठी तो किसी ने मुझे कमर

उठाकर मेरा बच्चा उसकी अर्थी में छुपा दिया और 'राम नाम सत है' कहते हुए सारे भाई-बन्द उसे लेकर चले गये। चम्मा की मौत शायद सबसे पहली मौत थी जो मैंने अपनी आँखों देखी।

बचपन में चम्मा की झोंपड़ी में खेलने-खाने और उसकी ममतामयी आँखों के नीचे तरह-तरह की शैतानी करने की धुंधली-धुंधली-सी स्मृति अब भी मेरे साथ है।

और जब अपने उभरते यौवन के दिनों में आर्य समाज के अछूतोद्धार और बाद को गांधी जी के हरिजन आन्दोलन के साथ मेरी सहानुभूति जगी तो मुझे इस बात पर गर्व होता था कि मेरी तो एक माँ ही चमारिन चम्मा थी, और जब एक दिन शायद नगर के आर्य समाज में आयोजित किसी प्रीतिभोज में मैंने अछूतों की पंगत में बैठकर कच्चा खाना खा लिया तो मुझे बड़ी प्रसन्नता और संतोष का अनुभव हुआ, और मुझे लगा कि मैंने चम्मा की बिरादरी के साथ कुछ न्याय किया, पर मेरे सम्बन्धियों और नातेदारों को यह खबर बड़ी नागवार गुजरी और उन्होंने व्यंग्य से कहा कि आखिर इसने चमारिन की छाती का दूध पिया था, उस कुसंस्कार का कुछ असर तो होना था ही। यह संस्कार का प्रभाव था, कि देश के समाज-सुधारक नेताओं के उपदेश का, कि मेरे अपने ही मानवतावादी उदार-विचारों का, कि मेरे मन से बहुत पहले ही अछूतों को अछूत समझने की बात बिल्कुल उठ गई थी। जब स्वतंत्र रूप से मेरा अपना घर हुआ तो अवसर चमार ही मेरे खाना बनाने वाले रहे। मुझे आश्चर्य और क्रोध तो तब होता जब घर की कहारिन चमार के छुए बर्तनों को माजने से इनकार कर देती। हिन्दू समाज-तंत्र में अछूतपन की भी श्रेणियाँ हैं। आजकल जमादार की लड़की—कमला, मेरे घर में काम करती है और कभी-कभी खाना भी बनाती है। मुझे लगता है कि मेरे पूर्वजों ने अछूतों का अपमान करके जो पाप किया था उसका यत्किंचित् प्रायश्चित्त मैं कर रहा हूँ। सामाजिक स्तर पर कोई सुधार हो, इसके पूर्व व्यक्ति-व्यक्ति को निर्भीकता और साहस के साथ आगे बढ़ना होगा।

इधर मैं सोचने लगा हूँ कि अछूतों के साथ या उनके हाथ का खाना-पीना अथवा उनके लिए मन्दिरों का द्वार खोलना केवल रूमानी औपचारिकताएँ अथवा प्रदर्शन हैं। समाज में उनको अपना यथोचित स्थान तभी मिलेगा जब उनमें शिक्षा का व्यापक प्रचार हो और उनका आर्थिक स्तर ऊपर उठे। साथ ही जाति की शृंखला को ऊपर से नीचे तक टूटना नहीं तो ढीला होना होगा। जाति की जड़, अर्थहीन और हानिकारक रूढ़ियों में निम्नवर्गों के लोग उतने ही जकड़े हैं जितने उच्चवर्ग के लोग। एक छोटा सा कदम इस दिशा में यह उठाया जा सकता है कि लोग अपने नाम के साथ अपनी जाति का संकेत करना बन्द कर दें। जिन दिनों मैं यूनिवर्सिटी में प्राध्यापक था, मैं अपने बहुत से विद्यार्थियों को प्रेरित करता था कि वे अपने नाम के साथ अपनी जाति न जोड़ें—अपने को रामप्रसाद त्रिपाठी नहीं, केवल रामप्रसाद कहें। भारत की आजाद सरकार चाहती तो एक विधेयक से नाम के साथ जाति लगाना बन्द करा सकती थी—कम से कम सरकारी कागजों से जाति का कॉलम हटा सकती थी; इसके परिणाम दूरगामी और हितकर होते। पर अभी उसमें कुछ भी क्रांतिकारी करने का साहस नहीं है। वह जैसा चला आया है वैसा ही, या उसमें थोड़ा बहुत हेर-फेर करके चलाए चले जाने में ही अपनी चातुरी और सुरक्षा समझती है।

मेरी माँ ने मेरे लिए और कौन-कौनसी मानताएँ मानी और उतारी इसकी मुझे याद नहीं, हालाँकि मेरे बचपन में उनकी चर्चा बराबर की जाती थी। एकाध बातें, शायद अधिक चित्रमय होने के कारण, मुझे याद हैं। जैसे उन्हें किसी ने मुझे बेच देने की सलाह दी थी, वैसे ही उनकी किसी मुसलमान पड़ोसिन ने राय दी थी कि सब तरह के अजाब, आसेब से बचाने के लिए वे मुझे मुहर्रम के दिनों में इमाम साहब का फकीर बना दिया करें। हर साल मुहर्रम की नवीं तारीख को मुझे नया सफेद पजामा और हरे रंग की कफनी पहनाई जाती, जनेऊ की तरह दोनों कंधों पर पीली लाल कलाई की माला डाली जाती, मेरे हाथ में एक छोटा-सा बटुआ दे दिया जाता और मैं इमाम साहब का फकीर बन जाता, और राधा (कवि के प्रपितामह की

[illegible]), जो मेरे जन्म के बाद [illegible] मेरे घर, मेरे साथ बिताते थी, उन्हें [illegible] के घर-घर [illegible] जाती। मैं हर [illegible] पहन कर [illegible], 'इमाम साहब का फकीर' और [illegible] मेरे हाथों में एक-दो पैसा धर देती, जिसे मैं [illegible] बटुए में रख लेता। दद्दा की इन पैसों की [illegible] मिठाई आती और उसे [illegible] में रखकर मेरे हाथों दुलदुल घोड़े को खिलाया जाता जिसका जुलूस ठीक हमारे घर के सामने से होता, पास के इमामबाड़े को जाता था। घोड़े के आगे-पीछे सैकड़ों मुसलमान भाइयों की जगह पर [illegible] बँधे एक [illegible] में जोर-जोर से छाती पीटते और एक सधे स्वर में 'हुसैन-हुसैन' चिल्लाते चलते, बुजुर्ग जो साथ होते छाती पीटने की रस्म अदाई भर करते। घोड़े के मुँह से बचे दो-चार दाने भूस में रह जाते, वे मुझे प्रसाद की तरह खिला दिये जाते और मैं साल भर के लिए सारी आधि-व्याधि से मुक्त मान लिया जाता। जुलूस निकल जाता तो कोई बड़ा-बूढ़ा उस लड़ाई की कथा सुनाता जिसमें इमाम साहब और उनके परिवार के लोग शहीद हुए थे। बाद को कभी यह कथा मैंने अधिक विस्तार से पढ़ी। लड़कपन में जब मुहर्रम के ढोल की आवाज़ डम-डम-डम-डम—कानों में पड़ने लगती तो मैं जान जाता कि मेरे इमाम साहब का फकीर बनने का वक्त नजदीक आ गया है। जब शायद मैं ८—९ साल का था, मुहर्रम—दशहरा साथ-साथ पड़ा, दोनों के जुलूसों में टक्करें हुईं, हिन्दु-मुस्लिम दंगे हुए तभी से यह रस्म बन्द कर दी गई।

मेरे लिये मेरी माँ न दो-एक व्रत भी ठाने थे। हर मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को वे निर्जल व्रत रखती और चन्द्रोदय देखकर फलाहार करती। पौष या माघ में चाँद रात देर से निकलता है। गर्मी के दिनों में उन्हें विशेष कष्ट होता और वे मछली की तरह तड़पती। बरसात में कभी-कभी चाँद दिखलाई ही न देता और उन्हें भूखे-प्यासे सो जाना पड़ता, पर यह व्रत मृत्यु-पर्यन्त रखती रहीं। जब से मुझे याद है वे प्रति मंगलवार को सम्पूर्ण सुन्दर-काण्ड का भी पाठ करतीं। हनुमान जी को मगद के लड्डू चढ़ाती, दिन में केवल एक बार

बगैर नमक के भोजन करती और मुझे जब प्रसाद देतीं तब सुन्दर-न
एक अर्द्धाली कहकर मेरे सिर पर हाथ रखती—

'अमर, अमर, गुन निधि सुत होहू
बहुत करहूँ रघुनायक छोहू'

छुटपन में मुझे इन पंक्तियों से अधिक सार्थक तो लड्डू ही
बड़े होने पर—जब पाठ सुनते—सुनते काण्ड की बहुत सी चौपाइयां
में बस गई थी और उनका कुछ-कुछ अर्थ भी समझ में आने लगा था-
में अधिक प्रसाद पाने के लिए मैं एक विनोद करता; जैसे ही उनकी
वाली अर्द्धाली समाप्त होती मैं कह देता—'सुनहु मातु मोहि अतिसय
और माँ एक-दो लड्डू और मेरे हाथों में रख देती।

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. भक्त-कथा के बारे में बच्चन के विचारों पर प्रकाश डालिए।
२. बच्चन की माता ने अपने पुत्र को रक्षा के लिए कौन-कौनसी मानतायें मा उतारी? अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।
३. 'सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा' इस काव्य-पंक्ति के लेखक हैं—
   (क) सूरदास
   (ख) बच्चन
   (ग) तुलसीदास
   (घ) मीराबाई
   सही विकल्प के आगे ✓ का निशान लगाइये।

निरालाजी के संस्मरण

(ले० रामविलास शर्मा)

[संस्मरण अतीत की स्मृति है। यह स्मृति अपने विगत जीवन की हो सकती है और किसी अन्य व्यक्ति से सम्पर्क की भी। संस्मरण की रचना में स्मृति के माधुर्य के साथ आत्मीयता की शीतलता भी होती है। संस्मरण का मुख्य उद्देश्य जीवन के किसी काल-खण्ड का चित्रण अथवा किसी व्यक्ति विशेष का चरित्र-चित्रण होता है। इस चित्रण का आधार होता है-निजी अनुभव। निजी अनुभव और उसकी स्वच्छ तथा आत्मीय शैली में अभिव्यंजना-ये ही दो तत्व संस्मरण रचना के मुख्य आधार हैं।

प्रस्तुत रचना में श्री रामविलास शर्मा ने अपने अनुभवों के दर्पण में निराला के चरित्र पर सुन्दर प्रकाश डाला है। निराला की उग्रता प्रसिद्ध है किन्तु अपने साथी साहित्यकारों के प्रति उनके मन में कितना प्रेम और आदर था यह इस रचना से भली प्रकार प्रकट है। निराला के कविता लिखने की मनस्थिति पर भी लेखक ने अच्छा प्रकाश डाला है।]

निराला जी की एक विशेषता यह थी कि कविता लिखने से पहले वह उसकी भाव-राशि, विषयवस्तु की चर्चा बहुत कम करते थे। कोई भी कविता लिखने से पहले वह उसकी भाव-राशि को कुछ दिन तक अपने मन में सँजोए रखते थे, मानो वह उनके मन में धीरे-धीरे रूप और आकार ग्रहण कर रही हो। दूसरों की कविताओं की चर्चा काफी करते थे, अपने पिछले साहित्यिक जीवन की चर्चा भी करते थे, लेकिन उस समय उनके कवि-हृदय में कौन-सी अस्फुट कविता गूँज रही है, इसका पता लगाना कठिन था। उस समय निरालाजी के बारे में लोगों की यह आम धारणा थी कि वह अपने आगे किसी को नहीं

मिलते। बात किसी हद तक ठीक भी थी। इसलिए यह और भी आश्‍
की बात थी कि जिन भावों में उनका मन सबसे ज्यादा डूबा रहता
और जिन्हें चुपचाप वह छंद और शब्दों का सुन्दर रूप देते में लगे
थे, उनकी वह बात भी न करते थे। लोग उनकी ऊपरी बातों, रह
सहन, चाल-ढाल से इतना आकर्षित होते थे कि वे बाहर न प्रकट
वाले कवि निराला को भूल जाते थे।

इसी तरह एक दिन ५८ नम्बर, नारियलवाली गली, लखनऊ
मकान में कुछ घंटे नीचे के कमरे में बिताने के बाद वह हाथ में
कागज लिए ऊपर आये, तब मैं उन्हीं के साथ रहता था। दो बन्द पढ़
सुनाए और बोले 'तुलसीदास' लिखना शुरू कर दिया है, अभी इत
ही लिखा है'। ये उनकी नई कविता के पहले छंद थे। इससे पहले उन्
इसका जरा भी आभास नहीं दिया था कि उनका मन तुलसीदास के स
चित्रकूट में घूम रहा है और नई कविता के भावों में वह इतना
हुए हैं। ऐसे ही एक दिन उन्होंने 'राम की शक्ति पूजा' का पहला ब
सुनाया। तब तक उतना ही लिखा था। पूछा—कैसा है? तारीफ क
पर प्रसन्नता से बोले—तो पूरा कर डालें इसे? मानो ऐसी सुन्दर कवि
को पूरा करने के लिए वह किसी की तारीफ की ही राह देख रहे हों

निरालाजी की बहुत-सी कविताएँ आसानी से समझ में न
आतीं। इससे कुछ लोगों ने अनुमान लगाया था कि शब्दों को ठू
ठाँस कर वह किसी तरह कविता पूरी कर देते हैं। वास्तव में कवि
लिखने में वह बहुत परिश्रम करते थे; हर पंक्ति, हर शब्द के संगी
और उसकी व्यंजना का ध्यान रखते थे। कविता ही नहीं, कभी-क
पत्र लिखते हुए भी वह भाषा के गठन का इसी तरह ध्यान रखते थे
उनके यहाँ कभी-कभी जो अधलिखे पोस्टकार्ड देखने को मिलते थे उनक
यही रहस्य था। थोड़ा-सा लिखा, पसन्द न आया दूसरे कार्ड प
लिखने लगे।

कविताएँ पढ़ने और सुनाने में उन्हें बड़ा आनन्द आता था।

[illegible] कविताएँ [illegible], [illegible], सुनाते भी। सुनाते-सुनाते [illegible] है, [illegible] था और उनका विचार [illegible] को [illegible] था। कविता सुनाते हुए [illegible] वह उनकी निराली अपनी व्याख्या कर देते थे, उनकी अपनी व्याख्या कोई भी आलोचक न कर सकता था। अपनी कविताएँ सुनाते थे तो स्वर के उतार-चढ़ाव से और हाथों की मुद्रा से [illegible] करते थे कि न समझने वालों को भी थोड़ा बहुत रस मिल जाता था। कभी-कभी कालिदास या शेक्सपियर की किसी कविता को लेकर वह हमसे उसकी चर्चा करते, दूसरों को उसका मर्म समझाते, कभी-कभी औरों की परीक्षा भी लेते। शेक्सपियर के एक सॉनेट को लेकर वह पंडितजी वे कई अध्यापकों को परेशान कर चुके थे। जब दूसरे व्याख्या न कर पाते तब स्वयं प्रसन्न होकर उसकी व्याख्या करते थे। इसी तरह मेघदूत के कुछ छंदों को लेकर उन्होंने संस्कृत के कुछ आचार्यों की परीक्षा भी ले डाली थी।

निराला जी का घर साहित्य-प्रेमियों का तीर्थ-स्थान था। प्रसिद्ध साहित्यकारों से लेकर विद्यार्थियों तक के लिए उनका द्वार खुला रहता था। कविवर सुमित्रानन्दनजी पंत जब लखनऊ आते थे, तब उनके यहाँ अवश्य आते थे।

दोनों कवियों का सरल प्रेमालाप सुनकर पता भी न चलता था कि उन्होंने एक-दूसरे की तीखी आलोचना की होगी। एक बार दोपहर को निराला जी ने अपने कवि मित्र को होटल में खाना खिलाया, फिर वहीं कविता सुनाने को कहा। होटल में और पन्त जी की कविता ! निरालाजी का आग्रह ! पन्त जी ने अपने कोमल स्वर में जग के उर्वर आँगन में, बरसो ज्योतिर्मय जीवन'...यह कविता गा कर सुनाई। सभी लोग मुग्ध होकर सुनते रहे। उस छोटे होटल में कुछ देर के लिए वेटर प्लेट उठाना भूल गए। कविता समाप्त होने पर निरालाजी ने विजय गर्व से मुस्कराते हुए कहा—"देखो ! कितनी सुन्दर कविता थी", मानो

पन्तजी ने उन्ही की कविता सुनाई हो। फिर कोमलकान्त पदावली के कवि को सहेज कर वहां से चल दिए, मानो ज्यादा ठहरने से किसी की नजर लग जावेगी।

एक बार स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद लखनऊ पधारे। निरालाजी उनसे ऐसे सम्मान से बातें करते थे मानो बड़ा भाई आ गया हो और उन्हे अपने को विशेष सयत रखना पडता हो। शाम को एक स्थान पर प्रसादजी का कविता-पाठ हुआ। लौटते हुए पूछा—"कैसा लगा कविता पाठ"? उनके स्वर मे ऐसी आतुरता थी मानो हिन्दी-कविता का भविष्य सुनने वालों की प्रशसा पर ही निर्भर था और जब प्रसाद जी की मृदुता और सरसता की तारीफ सुन ली तो बोले—"हां, प्रसादजी बहुत सुन्दर पढते है"। घर लौटते तक वह उसी तरह प्रसन्न बने रहे।

साहित्यकारो का वह सम्मान करते थे। साहित्य-प्रेमियो से खुल कर मिलते थे। लेकिन धन और वैभव का सम्मान करना उन्होने न सीखा था। एक राजा साहब लखनऊ आए थे। उनके सम्मान मे गोष्ठी हुई। सभी साहित्यकार एकत्र हुए। राजा साहब के आते ही सब लोग उठ खडे हुए, केवल निरालाजी बैठे रहे। राजा साहब के एक भूतपूर्व दीवान लोगों का परिचय कराने लगे—'गरीबपरवर! ये अमुक साहित्यकार है।' जब निरालाजी तक पहुँचे तब महाकवि उठ कर खड़े हो गए और भूतपूर्व दीवान को 'गरीबपरवर' से आगे बढने का मौका न देकर बोल उठे—"हम वो है जिनके दादा के दादा की पालकी आपके दादा के दादा के दादा ने उठाई थी।" यानी भूषण की पालकी छत्रसाल ने उठाई थी। भूषण के वशज हुए निरालाजी और छत्रसाल के वशज हुए राजा साहब।

इसके विपरीत, एक दिन मैंने देखा कि निरालाजी के यहाँ एक किसान जैसा लगने वाला आदमी बैठा है और वह उससे बड़े प्रेम से अवधी मे बातें कर रहे हैं। वह आदमी कुछ अजीब ढंग से गाधी टोपी लगाए था। चेहरा सूखा-साखा, ओठो पर घनी बेतरतीब मूछें फैली हुई। बातचीत मे देहाती और देखने मे भी देहाती। निरालाजी ने बड़े सम्मान से उस व्यक्ति का

किन्ना देख कर सोडने पर साग्रुजी कैसे परेशान हुई, इस सबका अकेले ही अभिनय करके वह रगमंच के अभिनेताओं को मात कर देते थे। जिस होट में पन्तजी से कविता सुनी थी, एक दिन वहीं खड़े होकर वह किसी कुश्त का वर्णन कर रहे थे। 'ना....ना' करने पर भी एक श्रोता को पकड़ क उन्होंने ऐसा झोंका दिया कि बेचारा दरवाजा न पकड़ लेता तो सड़क पर ही या गिरता। हर चीज का सक्रिय प्रदर्शन ही उन्हें पसन्द था।

उनके लडके का विवाह था। हजरतगंज की एक कोठी में आयोज था। दो साहित्यकारो में वाद-विवाद करते हुए कुछ कहा-सुनी हो गई। कुछ सक्रिय हाथापाई की नौबत आगई कि निरालाजी शोर सुन कर बाहर आ गये उनकी गम्भीर आवाज—"क्या बात है ?" सुनते ही सन्नाटा छा गया। जैसे कोई नटखट बच्चो को शान्त करे, उन्होंने सभी महारथियों को यथास्थान बैठा दिया। उनकी मारपीट की मैंने अनेक कहानियाँ सुनी हैं, यद्यपि दुर्भाग्य से देखी एक भी नहीं। एक बार लखनऊ में एक छोटी-सी गली मे कुछ तस्वीरें बेचने वालो से झगडा हो गया था। अभिमन्यु की तरह घिर जाने पर वह व्यूह-भेद कर सकुशल बाहर निकल आये थे। सुना है कि एक बार कलकत्ते में और दूसरी बार उन्नाव में उन्होंने कुछ प्रकाशको की बेईमानी से चिढ कर उनकी पूजा की थी। साधारणतः वह अपने व्यवहार में सरलता और भोलेपन का ही परिचय देते थे। प्रयाग के एक साहित्यकार ने उन पर व्यक्तिगत आक्षेप करते हुए लेख लिखा था। उसे उन्होंने सदेश भेजा था "तुम्हारे लिए चमरौधा भिगो रखा है।" जब वह महाशय लखनऊ आये तो महाकवि ने केलो और सन्तरों से उनका सत्कार किया और तब से वह निराला जी के अनन्य भक्त बन गये।

बातचीत में कभी-कभी उनसे अपरिचित लोग असम्मानजनक ढंग से बात करने लगते थे। अक्सर इसका वह बुरा न मानते थे। लखनऊ के विक्टोरिया पार्क में एक दिन शाम को बैठे हुए उन्होंने एक चाट वाले को बुलाया।

उनका मन किस दुःख-सागर में डूबा रहता था, इसे उनके सिवाय कोई नहीं जानता। अपनी कन्या सरोज की मृत्यु से उन्हें गहरा धक्का लगा था। जिस समय उन्हें यह समाचार मिला, वह अपनी समस्त वेदना हृदय में दबाने का प्रयास करते हुए कमरे में टहलते रहे। कुछ देर बाद बाहर घूमने चले गए। दुःख के इस हृदय मंथन से उन्होंने जो अमृत निकाला, वह उनकी अमर कविता 'सरोज-स्मृति' थी। एक बार उन्हें डलमऊ में गंगा के किनारे ऐसे ही भावविभोर में देखा था। उनकी पत्नी की चिता कहाँ जली थी, उन्हें याद था कितनी रातों को वह अकेले वहाँ घूमे थे, यह भी उन्हें याद था। प्रथम महायुद्ध के बाद इन्फ्लूएंजा से किस मोड़ पर लाशों के कारण गंगा का प्रवाह रुक गया था, यह भी उन्हें याद था। उन्होंने अपना ही दुःख नहीं झेला, दूसरों के दुःख से वह और भी व्यथित हुए। इस व्यथा ने उन्हें जर्जर कर दिया। फिर भी अपने से अधिक दूसरों की व्यथा से पीड़ित होकर उन्होंने अपनी अस्वस्थता के दिनों में लिखा है—"माँ अपनो आलोक निहारो, नर को नरकत्रास से वारो'''"

निराला जी हिन्दी-प्रेमियों के हृदय-सम्राट थे। जितने बड़े वह साहित्यकार थे, उससे भी बड़े वह मनुष्य थे। छोटों का सम्मान करना उनके इस बड़प्पन की सबसे बड़ी विशेषता थी।

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. प्रस्तुत संस्मरण के आधार पर निरालाजी की चरित्रगत विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

२. श्री रामविलास शर्मा के संस्मरणों के आधार पर सुमित्रानन्दन पंत और जयशंकर प्रसाद से निराला के आत्मीय सम्बन्धों पर प्रकाश डालिये।

३ 'सरोज-स्मृति' किस प्रकार की रचना है—

(क) गीतात्मक

(ख) आत्मकथात्मक

(ग) ऐतिहासिक

(घ) वीर रसात्मक

सही विकल्प के आगे ✓ का निशान लगाइये।

डायरी

ऐतिहासिक उपवास का आरम्भ

(ले० महादेव देसाई)

[गद्य-साहित्य की विविध रचनाओं में डायरी सर्वाधिक अन्तरंग-रचना-विधा है। डायरी लेखन में लेखक सर्वथा निश्छल होकर अकृत्रिम शैली में अपने भाव या विचार प्रकट करता है। डायरी की रचना प्रथमतः लेखक अपने लिए करता है यद्यपि बाद में, महत्वपूर्ण होने पर, डायरी प्रकाशित होकर अन्य पाठकों की भी हो जाती है। मूलतः अपने लिए लिखित होने के कारण डायरी रचना में चमत्कार या सायास अलंकरण के लिए स्थान नहीं होता। सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति ही डायरी की सफलता की कसौटी है।

महादेव भाई देसाई काफी समय तक गांधीजी के निजी सचिव रहे थे। और प्रतिदिन डायरी लिखते थे। महादेव भाई देसाई द्वारा लिखित प्रस्तुत अंश में गान्धीजी के एक ऐतिहासिक उपवास के प्रथम दिन का वर्णन है। यह उपवास गान्धीजी ने ब्रिटिश सरकार द्वारा दिये गये साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध पूना की यरवदा जेल में किया था। इस निर्णय द्वारा ब्रिटिश सरकार ने अछूतों को हिन्दुओं से अलग माना था। गान्धीजी ने पहले ही घोषणा करदी थी कि वे इस तरह के कार्य का विरोध अपने प्राण देकर भी करेंगे। यह उपवास २० सितम्बर १९३२ ई० को शुरू हुआ और २६ तारीख को सवर्ण हिन्दुओं तथा अछूतों के बीच पूना समझौते के बाद समाप्त हुआ।]

२०-९-३२

अनशन का मंगल प्रभात।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के नाम पत्र

प्रिय गुरुदेव,

"मंगलवार को प्रातःकाल तीन बजे हैं। आज दोपहर को मेरा अग्नि प्रवेश होगा। इस कार्य को अगर आशीर्वाद दे सकते हो, तो मुझे आपका आशीर्वाद चाहिये। आप मेरे सच्चे मित्र हैं, क्योंकि आप साफ कहने वाले हैं और जो दिल में होता है वह स्पष्ट कह देते हैं। मैंने आपसे उपवास के पक्ष या *विपक्ष में आपकी पक्की राय की आशा रक्खी थी। लेकिन आपने आलोचना* करने से इनकार कर दिया। अब तो यह आलोचना उपवास के दौरान में ही आ सकती है। अगर आपका हृदय मेरे इस कार्य की निन्दा करता हो, तो भी आपकी आलोचना को मैं भेंट समान मानूंगा। मुझे अपनी भूल का पता लग *जाय और उसका इकरार करने की कुछ भी कीमत चुकानी पड़े, तो भी मैं* *इतना अभिमानी नहीं हूँ कि अपनी भूल का खुला इकरार न करूँ।* आपका दिल मेरे इस काम को पसन्द करे तो मुझे आपका आशीर्वाद चाहिये। वह मुझे बल देगा। मुझे आशा है कि मैं अपनी बात साफ कह सका हूँ।"

मीरा को :

"आज ढाई बजे उठ गया हूँ। गुरुदेव को और शास्त्री को पत्र लिखे। अब तुझे लिख रहा हूँ। तेरा हृदय-विदारक पत्र मिल गया। पढ़ते ही मुझे लगा कि यह पत्र मैं गवर्नर को भेज दूँ। मगर यह विचार जैसे ही मन में आया, वैसे ही निकाल डाला। तूने भट्ठी में रहना पसन्द कर लिया है। इसलिए तुझे उसमें रहना ही चाहिये। इतने वर्षों में तू देख सकी होगी कि मेरा सत्याग्रह छोटे बच्चों का खेल नहीं है। इसलिए तुझे जहर की आखिरी बूँद तक पीनी होगी।

अपनी प्रतिज्ञा की सूचना देने वाला पहला पत्र मैंने (सरकार को) लिखा, तब मुझे तेरा और बा का खयाल आया था। घड़ी भर तो मुझे बाहर

ईश्वर की कृपा अपार है। बापू ने सुबह ही रवि बाबू का स्मरण किया। उनसे आशीर्वाद देने या नाराजगी जाहिर करने वाले पत्र की प्रार्थना की और यह पत्र जब मैं जेलर को देता हूँ, तभी उनसे मुझे तारों का एक पुलिन्दा मिलता है। उसमें रविबाबू का यह तार निकला :

"हमारे देश की एकता और हमारे समाज की अखण्डता के लिए कीमती जीवन का बलिदान देने लायक है। हमारे शासकों पर इसका क्या असर होगा, इसकी हम कल्पना नहीं कर सकते। वे लोग यह नहीं समझ सकते कि यह चीज हमारे लोगों के लिए कितने महत्व की है। फिर भी इतना तो निश्चित है कि ऐसे स्वेच्छापूर्ण बलिदान का हमारे देश-बन्धुओं के दिलों पर जो भारी असर होगा, वह निष्फल नहीं जायेगा। मैं यह उत्कट आशा रखता हूँ कि ऐसी राष्ट्रीय विपत्ति को आखिरी हद तक पहुँचने देने जैसे कठोर हम नहीं होंगे। हमारे दुःखी हृदय पूज्य-भाव और प्रेम के साथ आपकी भव्य तपश्चर्या का अनुसरण कर रहे हैं।"

रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

इसलिए बापू ने तार लिखा :

"सुबह के साढ़े दस बजे। मैं सुपरिण्टेण्डेण्ट को आपके नाम लिखा हुआ पत्र देने जा रहा था कि आपका प्रेमपूर्ण और भव्य तार मुझे मिला। थोड़ी ही समय मे मैं जो अग्नि प्रवेश करने वाला हूँ उसमें यह मुझे सहारा देगा। मैं आपको तार भेज रहा हूँ। धन्यवाद।"

मो० क० गान्धी।

सवेरे रविबाबू को पत्र लिखने के बाद मैंने एक दो सवाल किये। "मैकडोनल्ड जैसे उठाऊगीर आदमी ने योग्यायोग्य का विवेक न रखने वाले मनुष्यों के वश होकर जो निर्णय किया है, वह बदले तभी यह उपवास छूट सकता है, ऐसी शर्त आपने रखी है। लेकिन यह क्या इस उपवास का दोष नहीं है ? यह आदमी निर्णय बदल भी दे तो इसमें उसकी हृदय-शुद्धि तो हुई न होगी।"

बापू कहने लगे : "नहीं, इससे क्या ? हृदय शुद्धि न हो, मगर दूसरे उपवास आये बिना नहीं रह सकते। हिन्दू समाज की शुद्धि हो जाय, तो काफी है।"

मैं : "आप हिन्दू समाज में शुद्धि चाहते हैं और वह सात दिन में ही हो जानी चाहिये। क्या यह दुराग्रह नहीं है ?"

बापू : "नहीं, सात दिन में नहीं चाहता। सात दिन में जो कुछ मैं कहता हूँ, वह तो थोड़ा ही है और मेरे उपवास लम्बे जायें तो क्या बुराई है ? इनके लम्बे जाने का अर्थ इतना ही है कि जितनी खलबली मचनी हो, मच जाय। और मैकडोनल्ड न सुने, तो भी क्या ? जब सब कुछ भगवान ही कर रहा है, करा रहा है तो फिर उसकी लीला देखकर नाचना चाहिये या रोना चाहिये ? 'जुआ खेलने वाले का जुआ मैं हूँ और छल करने वाले का छल मैं हूँ' यह कहकर उसने सब कुछ कह दिया है। यह जान लेने के बाद यह शरीर नष्ट हो जाय तो इसकी क्या परवाह ? दुःख कराने वाला भी वही है। उपवास कराने वाला भी वही है।"

वल्लभ भाई से कहने लगे : "तुम में रोष भरा हुआ है। जब तक यह रोष है, तब तक तुमको उपवास नहीं करना चाहिये, न किसी से कराना चाहिये। सबसे कहो कि जिसमें क्रोध का नाम निशान भी न हो, वही यह काम ले। दूसरों को उपवास की प्रतिज्ञा लेने का अधिकार नहीं।

बापू : "जरूर छोड़ दूँगा। मगर यह सवाल पूछना नहीं चाहिये। [illegible] का नाम इस निर्णय के बदलवाने से ज्यादा बड़ा चमत्कार है। मगर इसका जवाब प्रकाशित नहीं किया जा सकता, क्योंकि जनता पर उलटा असर पड़ सकता है। यह तो मन में समझ लेने की बात है।"

कल आम्बेडकर का बयान पढ़ा जा रहा था, तब बापू बोले : "मुझे इससे जरा भी गुस्सा नहीं आता। इसे यह सब कहने का अधिकार है। आज वह जो कुछ कर रहा है, अन्त्यज चिढ़कर जो कुछ कर रहे हैं, मैं उसके लायक ही हूँ। हम सब इसी लायक हैं।"

सवेरे भगवद् गीता का पाठ शुरू करते समय सिसक-सिसक कर रोना आ गया। मेरे मन में यही भावना थी कि मेरे जैसे 'कुटिल खल कामी' को बापू के उपवास के प्रारम्भ में गीता पाठ करने का क्या अधिकार है?

बारह बजते ही 'उठ जाग मुसाफिर भोर भई' भजन गाकर [illegible] किया कि उपवास शुरू हो गया। बापू बोले : "निर्णय रूपी चिड़िया खेत को खा रही है, हम जाग कर उठ बैठे, नहीं तो मारे जायेंगे।"

इसके बाद एक बजे होरस आया। उसने पूछा : "आपका निश्चय कायम है?"

बापू बोले "हाँ"

तब वह कहने लगा : "सरकार ने आपके बारे में यह बयान जारी करने का निश्चय किया है। आज यह बयान शिमला में दिया जायगा।"

बापू बोले : "ठीक है। मैं तो खुश हुआ, मगर आप पर काम का भार [illegible] पड़ेगा।" और थोड़ी बातें हुईं पर मैं [illegible] सुनी।

फिर देवदास की बात निकली। होरस ने पूछा : "आपका जो लड़का आया था, उसका क्या हुआ है? उसकी उमर क्या है?"

बापू ने कहा : "वह [illegible] [illegible] पर पैदा हुआ था। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

उसने पूछा। आपको मथुरादास से मिलना है ?"

बापू : "नहीं मथुरादास से मिलने की जरूरत नहीं। उसे वहीं रहना चाहिए।"

होरेस : "यह तो ठीक है, मैं मथुरादास के लिए ही नहीं कहता; मगर आपकी शान्ति के लिए जो कुछ भी करने लायक हो, वह करने को तैयार हूँ।"

बापू : "नहीं, नहीं। इतने पत्र लिखने की छूट हो तो काफी है। मगर एक बात कह दूँ। आप जानते हैं मीरा मेरे लिए कितनी पागल है। कल जब उसका यह पत्र आया तब पलभर के लिए जी में आया कि गवर्नर को लिखूँ कि यह आपका कितना हल्कापन है कि एक जलसेना नायक की लड़की को आप इस

तरह सताये और वह मुझ से न मिल सके ? फिर मैंने ही निश्चय
नहीं, यह तो मेरे पास आयी है आग में तपने को ही। इसे तपन
ज़हर में अमृत के घूँट पीने चाहिये। इसी तरह मैंने लिख दिया

डोइल को पत्र बताया। वह बोला; "मैं यह बात सर
तक पहुँचा दूँगा।"

आज शाम को बापू ने अखबार वालों को मुलाकात दी।
"दिल्ली में आखिरी दिन जैसा हुआ था, वैसा ही हो गया
जानता कि इतना सुन्दर वक्तव्य कैसे बन गया। उपवास का रह
इस तरह कभी नहीं बताया था। 'टाइम्स' वाला भला हो और
तो अच्छा।"

रात में बापू को जरा भी थकावट नहीं थी। २०८
लेटने के बाद बोले : 'उपवास में आकाश-दर्शन का जो लाभ उ
अवर्णनीय है। तुम तो परोक्ष प्रमाण देते हो, मगर मेरा प्रत्यक्ष
यह तारामण्डल हर क्षण जो शक्ति संचार कर रहा है, वही हमें
है। यह शक्ति मिलती रहे, तब तक हम क्यों मानें कि कोई
सर जेम्स जीन्स कहते हैं कि हम वैज्ञानिक लोग तो अभी कुछ
पाये हैं। इसके भीतर तो अपार शक्तियाँ भरी हैं।"

लेटे-लेटे कहने लगे : "वल्लभ भाई, तुमसे एक दिल्लग
कहनी रह गई। उस विलिंग्डन ने जयकर, सप्रू से कहा था :
था, जो उस बदमाश बनिये के आगे झुक गया। मैं ऐसा नहीं
इस पर जयकर को भूखे शेर की बात याद आयी थी। वह मेरे
बारे में कुछ नहीं जानता था।"

टिप्पणियाँ

१. मीरा—गांधीजी की सुप्रसिद्ध विदेशी शिष्या जिसने
होते हुए भी भारतीय नाम ग्रहण कर लिया था

सारा जीवन समर्पित कर दिया था। उपवास के दिनों में वह यरवदा जेल में ही बन्द थीं किन्तु उसे बापू से मिलने की मनाही थी।

२. बा—कस्तूरबा, गांधीजी की पत्नी

३. रामदास, देवदास—गांधीजी के पुत्र

४. वल्लभ भाई—सरदार वल्लभ भाई पटेल

५. काका—प्रसिद्ध साहित्यकार और गांधीवादी विचारक काका कालेलकर

६. मैकडोनल्ड—तत्कालीन ब्रिटिश प्रधान मन्त्री। इनके साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध ही गांधीजी ने आमरण अनशन किया था।

७. हाराकिरी—आत्महत्या करने का जापानी ढंग। इसमें अपने को छुरी मारकर आत्म-हत्या की जाती है।

८ निर्णय—ब्रिटिश प्रधान मन्त्री का साम्प्रदायिक निर्णय

९. आम्बेडकर—भारतीय अछूत वर्ग के सर्व प्रसिद्ध नेता भीमराव आम्बेडकर

१०. डोइल—ब्रिटिश जेलों के तत्कालीन सर्वोच्च अधिकारी

११. मैफिकिंग दिवस—१७ मई १९०० ई०। बोअर युद्ध के दिनों में इस दिन अंग्रेजों ने मैफिकिंग शहर के घेरे से मुक्ति पाई थी।

१२. टाइम्स—बम्बई से प्रकाशित होने वाला दैनिक पत्र टाइम्स आफ इण्डिया। यह उस समय प्रमुख भारतीय दैनिक समझा जाता था।

१३. भूखाशेर—एक जातक कथा में यह वर्णन आता है कि एक जन्म में बुद्ध ने अपना शरीर देकर एक भूखे शेर को सन्तुष्ट किया था। यहाँ अर्थ यह है कि गांधीजी बुद्ध के अवतार हैं और वाइसराय विलिंग्डन भूखा शेर है।

१४. जयकर, सप्रू—प्रसिद्ध लिबरल नेता पी० एन० सप्रू और सरोजिनी नायडू के पुत्र डॉ० जयकर।

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. गांधीजी ने उपवास आरम्भ करने से पहले किन-किन व्यक्तियों को पत्र लि
उन पत्रों में गांधीजी के जो मनोभाव ज्ञात होते हों उनका वर्णन कीजिये।

२. गांधीजी के उपवास के पहले दिन की घटनाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिये

३. 'अनशन और अशन दोनों एक हैं जैसे जन्म और मरण एक ही हैं"
वाक्य गांधीजी ने अपने किस पत्र में लिखे हैं—

(क) रवीन्द्रनाथ टाकुर के नाम पत्र में

(ख) मीरा बहन के नाम पत्र में

(ग) जवाहरलाल नेहरू के नाम पत्र में

(घ) काका कालेलकर के नाम पत्र में

सही विकल्प के आगे '✓' का निशान लगाइये।

: दो :

सरस्वती प्रेस, बनारस
३ अक्टूबर १९३२

प्रिय बनारसीदास जी,

बनारस से बाहर होने के कारण आपके खतों का जवाब देने में मुझे देर हो गई। आप चाहते हैं कि मैं आपके लिए कहानी लिखूँ। मैं इन दिनों खुराफात मे बुरी तरह फँसा हुआ हूँ। अकेलेदम 'जागरण' निकाल रहा हूँ। मेरा सारा वक्त उसी में चला जाता है। तो भी मैं एक कहानी लिखने की कोशिश करूँगा।

आपको 'कंकाल' पसन्द नहीं आया, इसका मुझे खेद है। मैं बड़ी उदार रुचि का आदमी हूँ और आलोचना-बुद्धि मुझ में कम है। 'कंकाल' मे मुझको सच्चा आनन्द मिला और मैं पुस्तक से भी अधिक उस आदमी का प्रशंसक हूँ। वह बहुत खुले हुए और स्पष्टवादी आदमी हैं।

अपने कहानी अंक के लिए आप हिन्दी के जाने-माने लेखकों से चीजें माँगिये, जैसे जैनेन्द्र, सुदर्शन, कौशिक, प्रसाद, द्विज। इनके अलावा आप चाहे तो गुजराती,बंगला, उर्दू और मराठी कहानीकारों को भी अपनी-अपनी भाषा मे एक कहानी लिखने के लिए आमंत्रित कर सकते हैं। फिर उसमें योरप और अमेरिका के आधुनिक-कहानीकारों के अनुवाद भी होने चाहिए। कहानी के मूल सिद्धान्तों पर एक लेख भी बेजा न होगा। शुभ कामनाओं के साथ,

आपका
धनपतराय

: तीन :

सरस्वती प्रेस, बनारस
१४ नवम्बर १९३२

प्रिय बनारसीदास जी, नमस्ते।

कृपा पत्र के लिए धन्यवाद। मैंने सदा आपको अपना सबसे सच्चा दोस्त

धापा तो यहाँ कांग्रेस की उलझनों में पड़ा रहा। शहर पर फौज का क
है। अमीनाबाद में दोनों पार्कों में सिपाही और गोरे डेरे डाले पड़े हुए
१४४ धारा लगी हुई है, पुलिस लोगों को गिरफ्तार कर रही है और का
१४४ धारा तोड़ने की फिक्र में है। डंडे की नई पालिसी ने लोगों की हिम
तोड़ दी है।

आप मुझ से मेरा चित्र मांगते हैं। एक चित्र कुछ दिन हुए लिखवा
था। वह लाहौर भेज दिया। वहाँ से ब्लाक मँगवाकर कहानियों के एक सं
'पांच-फूल' में छापा। उसी की एक परत फाड़कर भेज रहा हूँ। अगर इस
काम चल जाये तो क्यों नई तस्वीर खिंचवाऊँ। मैं तो समझता हूँ यह का
अच्छी है। अगर जरूरत होगी तो इसका ब्लाक भेज दूँगा, हालांकि ठीक न
कह सकता ब्लाक प्रेस में है या नहीं, क्योंकि 'वीणा' ने माँगा था। अगर व
चला गया होगा तो वहाँ से आने पर भेज दूँगा। हाँ, अगर बिल्कुल न
तसवीर की दरकार हो तो मुझे तुरन्त लिखिए खिंचवाकर भेज दूँ।'

मेरे विषय में आपने जो प्रश्न पूछे हैं उनका उत्तर यों है:—

१. मैंने १९०७ ई० में गल्प लिखना शुरू किया। सबसे पहले १९०
ई० में मेरा 'सोज़े वतन' जो पाँच कहानियों का संग्रह है, जमाना प्रेस
निकला था, पर उसे हमीरपुर के कलेक्टर ने मुझसे लेकर जलवा डाला था।
उनके खयाल में वह विद्रोहात्मक था, हालांकि तब से उसका अनुवाद कई
संग्रहों और पत्रिकाओं में निकल चुका है।

२. इस प्रश्न का जवाब देना कठिन है। दो सौ से ऊपर गल्पों में कहाँ
तक चुनूँ। लेकिन स्मृति से काम लेकर लिखता हूँ—

१. बड़े घर की बेटी २. रानी सारंधा ३. नमक का दारोगा ४.
सौत ५. आभूषण ६. प्रायश्चित्त ७. कामनातरु ८. मन्दिर और मस्जिद
९. घासवाली १०. महातीर्थ ११. सत्याग्रह १२ लाछन १३. सती १४.
लैला १५. मंत्र।

न मिलता था।

५. हिन्दी में गल्प-साहित्य अभी अत्यन्त प्रारम्भिक दशा में है। कहानी लिखने वालों में सुदर्शन, कौशिक, जैनेन्द्रकुमार, उग्र, प्रसाद यही नजर आते हैं। मुझे जैनेन्द्र और उग्र में मौलिकता और आर्टिस्ट के चिन्ह मिलते हैं। प्रसाद जी की कहानियाँ भावात्मक होती हैं, रियलिस्टिक नहीं। सुदर्शन जी की रचनाएँ सुन्दर होती हैं पर गहराई नहीं होती और कौशिक जी अक्सर बात को बेजरूरत बढ़ा देते हैं। किसी ने अभी तक समाज के किसी विशेष अंग का विशेष रूप से अध्ययन नहीं किया। उग्र ने किया मगर बहक गये। मैंने कृषक समाज को लिया मगर अभी कितने ही ऐसे समाज पड़े हैं जिन पर रोशनी डालने

आया तो यहाँ कांग्रेस की उलझनों में पड़ा रहा। शहर पर फौज का कब्जा है। अमीनाबाद में दोनों पार्कों में सिपाही और गोरे डेरे डाले पड़े हुए हैं। १४४ धारा लगी हुई है, पुलिस लोगों को गिरफ्तार कर रही है और कांग्रेस १४४ धारा तोड़ने की फिक्र में है। डंडे की नई पालिसी ने लोगों की हिम्मत तोड़ दी है।

आप मुझ से मेरा चित्र मांगते हैं। एक चित्र कुछ दिन हुए खिंचवाया था। वह लाहौर भेज दिया। वहाँ से ब्लाक मँगवाकर कहानियों के एक संग्रह 'पांच-फूल' में छापा। उसी की एक परत फाड़कर भेज रहा हूँ। अगर इससे काम चल जावे ना क्यों नई तस्वीर खिंचवाऊँ। मैं तो समझता हूँ यह काफी अच्छी है। अगर जरूरत होगी तो उसका ब्लाक भेज दूँगा, हालांकि ठीक नहीं कह सकता ब्लाक प्रेस में है या नहीं, क्योंकि 'वीणा' ने मांगा था। अगर वहाँ चला गया होगा तो वहाँ से मांग कर भेज दूँगा। हाँ, अगर बिलकुल नई तसवीर की दरकार हो तो मुझे तुरन्त लिखिए खिंचवाकर भेज दूँ।'

मेरे विषय में आपने जो प्रश्न पूछे हैं उनका उत्तर यों हैः—

१ मैंने १९०७ ई० में गल्प लिखना शुरू किया। सबसे पहले १९०८ ई० में मेरा 'सोजे वतन' जो पांच कहानियों का संग्रह है, जमाना प्रेस से निकला था, पर उसे हमीरपुर के कलेक्टर ने मुझसे लेकर जलवा डाला था। उनके खयाल में वह विद्रोहात्मक था, हालांकि तब से उसका अनुवाद कई संग्रहों और पत्रिकाओं में निकल चुका है।

२. इस प्रश्न का जवाब देना कठिन है। दो सौ से ऊपर गल्पों में कहाँ तक चुनूँ। लेकिन स्मृति से काम लेकर लिखता हूँ—

१. बड़े घर की बेटी २. रानी सारंधा ३. नमक का दारोगा ४. सौत ५. आभूषण ६. प्रायश्चित्त ७. कामनातरु ८. मन्दिर और मस्जिद ९. घासवाली १० महातीर्थ ११. सत्याग्रह १२ लांछन १३. सती १४. लैला १५. मंत्र।

'मंजिले मकसूद' नामक उर्दू कहानी बहुत सुन्दर है। कितने ही

मुसलमान मित्रों ने उसकी बड़ी प्रशंसा की है, पर अभी तक उसका अनुवाद नहीं हो सका। अनुवाद में सारा सारस्य गायब हो जायेगा।

३. मेरे ऊपर किसी विशेष लेखक की शैली का प्रभाव नहीं पड़ा। बहुत कुछ प० रतननाथ दर लखनवी और कुछ डॉ० रवीन्द्रनाथ ठाकुर का असर पड़ा है।

४. आय की कुछ न पूछिये। पहिले की सब किताबों का अधिकार प्रकाशकों को दे दिया। प्रेम-पच्चीसी, सेवासदन, सप्त-सरोज, प्रेमाश्रम, संग्राम आदि के लिए एक मुश्त तीन हजार रुपये हिन्दी पुस्तक एजेन्सी ने दिया। नवनिधि के लिए शायद अब तक दो सौ रुपये मिले हैं। रंगभूमि के लिए अट्ठारह सौ रुपये दुलारेलाल ने दिये। और सग्रहों के लिए सौ दो सौ मिल गये। कायाकल्प, आजाद कथा, प्रेमतीर्थ, प्रेमप्रतिमा, प्रतिज्ञा मैंने खुद छापे पर अभी तक मुश्किल से ६००) वसूल हुए हैं। और प्रतियाँ पड़ी हुई हैं। पुस्तक आमदनी लेखों से शायद २५) माहवार हो जाती है। मगर इतनी भी नहीं होती। मैं अब 'हंस' और 'माधुरी' के सिवा कहीं लिखता ही नहीं। कभी-कभी 'विशाल भारत' और 'सरस्वती' में लिखता हूँ। बस। हाँ, अनुवादों से भी अब तक शायद दो हजार से अधिक न मिला होगा। आठ सौ रुपये में रंगभूमि और प्रेमाश्रम दोनों का अनुवाद दे दिया था। कोई छापने वाला ही न मिलता था।

५ हिन्दी में गल्प-साहित्य अभी अत्यन्त प्रारम्भिक दशा में है। कहानी लिखने वालों में सुदर्शन, कौशिक, जैनेन्द्रकुमार, उग्र, प्रसाद यही नजर आते हैं। मुझे जैनेन्द्र और उग्र में मौलिकता और बाहुल्य के चिन्ह मिलते हैं। प्रसाद जी की कहानियाँ भावात्मक होती हैं, रियलिस्टिक नहीं। सुदर्शन जी की रचनाएँ सुन्दर होती हैं पर गहराई नहीं होती और कौशिक जी अक्सर बात को बेजरूरत बढ़ा देते हैं। किसी ने अभी तक समाज के किसी विशेष अंग का विशेष रूप से अध्ययन नहीं किया। उग्र ने किया मगर बहक गये। मैंने कृषक समाज को लिया मगर अभी कितने ही ऐसे समाज पड़े हैं जिन पर रोशनी डालने

पाया तो वहां कांग्रेस की उलझनों में पड़ा रहा। शहर पर फौज का ... है। अमीनाबाद में दोनों पार्कों में सिपाही और गोरे डेरे डाले पड़े ... १४४ धारा लगी हुई है, पुलिस लोगों को गिरफ्तार कर रही है और ... १४४ धारा तोड़ने की फिक्र में है। बड़े की नई पालिसी ने लोगों की ... तोड़ दी है।

आप मुझ से मेरा चित्र मांगते हैं। एक चित्र कुछ दिन हुए खिंच... था। वह लाहौर भेज दिया। वहां से ब्लाक मँगवाकर कहानियों के एक ... 'पांच-फूल' में छापा। उसी की एक परत फाड़कर भेज रहा हूँ। अगर ... काम चल जाये तो क्यों नई तस्वीर खिंचवाऊँ। मैं तो समझता हूँ यह ... अच्छी है। अगर जरूरत होगी तो उसका ब्लाक भेज दूँगा, हालांकि ठीक ... कह सकता ब्लाक प्रेस में है या नहीं, क्योंकि 'वीणा' ने मांगा था। अगर ... चला गया होगा तो वहां से आने पर भेज दूँगा। हां, अगर बिलकुल ... तसवीर की दरकार हो तो मुझे तुरन्त लिखिए खिंचवाकर भेज दूँ।'

मेरे विषय में आपने जो प्रश्न पूछे हैं उनका उत्तर यों है:—

१. मैंने १६०३ ई० में गल्प लिखना शुरू किया। सबसे पहले १६... ई० में मेरा 'सोजे वतन' जो पांच कहानियों का संग्रह है, जमाना प्रे... निकला था, पर उसे हमीरपुर के कलेक्टर ने मुझसे लेकर जलवा डाला ... उनके खयाल में वह विद्रोहात्मक था, हालांकि तब से उसका अनुवाद ... संग्रहों और पत्रिकाओं में निकल चुका है।

२. इस प्रश्न का जवाब देना कठिन है। दो सौ से ऊपर गल्पों में ... तक चुनूं। लेकिन स्मृति से काम लेकर लिखता हूँ—

१. बड़े घर की बेटी २. रानी सारंधा ३. नमक का दारोगा ... सौत ५. आभूषण ६. प्रायश्चित्त ७. कामनातरु ८. मन्दिर और मस्... ६. घासवाली १०. महातीर्थ ११. सत्याग्रह १२ लांछन १३. सती १... लैला १५. मन्त्र।

'मजिले मकसूद' नामक उर्दू कहानी बहुत सुन्दर है। कितने

हिन्दुस्तान मित्रों ने उसकी बड़ी प्रशंसा की है, पर अभी तक उसका अनुवाद नहीं हो सका। अनुवाद से शायद मालूम हो जायेगा।

३. मेरे ऊपर किसी विशेष लेखक की शैली का प्रभाव नहीं पड़ा। बहुत कुछ पं० रतननाथ दर सरशार और कुछ डॉ० रवीन्द्रनाथ ठाकुर का असर पड़ा है।

४. आय की कुछ न पूछिये। पहिले की सब किताबों का अधिकार प्रकाशकों को दे दिया। प्रेम-पचीसी, सेवासदन, ग्राम-परोक्ष, प्रेमाश्रम, संग्राम आदि के लिए एक मुश्त तीन हजार रुपये हिन्दी पुस्तक एजेंसी ने दिया। नवनिधि के लिए शायद अब तक दो सौ रुपये मिले हैं। रंगभूमि के लिए अठारह सौ रुपये दुलारेलाल ने दिये। और गल्पों के लिए सौ दो सौ मिल गये। कायाकल्प, आज़ाद कथा, प्रेमतीर्थ, प्रेमप्रतिमा, प्रतिज्ञा इनसे मुझे अब तक मुश्किल से ६००) वसूल हुए हैं। और अधिक नहीं हुई हैं। फुटकर आमदनी लेखों से शायद २५) माहवार हो जाती है। मगर इतनी भी नहीं होती। मैं अब 'हंस' और 'माधुरी' के सिवा कहीं लिखता ही नहीं। कभी-कभी 'विशाल भारत' और 'सरस्वती' में लिखता हूँ। बस। हाँ अनुवादों से भी अब तक शायद दो हजार से अधिक न मिला होगा। आठ सौ रुपये मैं रंग [illegible] इन दोनों का अनुवाद के लिए था। [illegible]

की जरूरत है। साधुओं के समाज को किसी ने स्पर्श तक नहीं किया। ह
यहाँ कल्पना की प्रधानता है, अनुभूति की नहीं। बात यह है कि अभी
साहित्य को हम व्यवसाय के रूप में नहीं ग्रहण कर सकते। मेरा जीवन
आर्थिक दृष्टि से असफल है और रहेगा। 'हंस' निकालकर मैंने किताबों
बचत का भी वारा-न्यारा कर दिया। यों शायद दस साल चार छः सौ
जाते पर अब आशा नहीं।

६. मेरी रचनाओं का अनुवाद मराठी, गुजराती, उर्दू, तामिल भाषा
में हुआ है। सबका नहीं। सबसे ज्यादा उर्दू में, उसके बाद मराठी में। तामि
और तेलगू के कई सज्जनों ने मुझसे आज्ञा माँगी जो मैंने दे दी। अनुवाद हु
या नहीं, मैं नहीं कह सकता। जापानी में तीन चार कहानियों का अनुव
हुआ है जिसके महाशय सावरवाल ने मुझे अभी कई दिन हुए ५०) भेजे हैं।
उनका आभारी हूँ। दो तीन कहानियों का अंग्रेजी में अनुवाद हुआ है। बस

७. मेरी आकांक्षाएँ कुछ नहीं हैं। इस समय तो सबसे बड़ी आकांक्ष
यही है कि हम स्वराज्य-संग्राम में विजयी हों। धन या यश की लालस
मुझे नहीं रही। खाने भर को मिल ही जाता है मोटर और बंगले की मु
हविश नहीं। हाँ, यह जरूर चाहता हूँ कि दो चार ऊँची कोटि की पुस्त
लिखूँ पर उनका उद्देश्य भी स्वराज्य-विजय ही है। मुझे अपने दोनों लड़क
के विषय में कोई बड़ी लालसा नहीं है। यही चाहता हूँ कि वे ईमानदार
सच्चे और पक्के इरादे के हों विलासी, धनी खुशामदी सन्तान से मुझे घृण
है। मैं शांति से बैठना भी नहीं चाहता साहित्य और स्वदेश के लिए कुछ
कुछ करते रहना चाहता हूँ। हाँ, रोटी-दाल और तोला भर घी और मामूल
कपड़े मयस्सर होते रहें।

बस आपके प्रश्नों का जवाब हो गया। मेरे जन्म आदि का ब्योरा
आपके ही पत्र में छप चुका है। अब आप अपना वचन पूरा कीजिए और 'हंस'
के लिए कुछ लिख भेजिए।

शेष सकुशल है। आशा है आप भी सकुशल होंगे।

भवदीय
धनपतराय

: दो :

सरस्वती प्रेस, बनारस
३ अक्टूबर १९३२

प्रिय बनारसीदास जी,

बनारस से बाहर होने के कारण आपके खतों का जवाब देने में मुझे देर हो गई। आप चाहते हैं कि मैं आपके लिए कहानी लिखूँ। मैं इन दिनों मुकदमात में बुरी तरह फँसा हुआ हूँ। अकेलेदम 'जागरण' निकाल रहा हूँ। मेरा सारा वक्त उसी में चला जाता है। तो भी मैं एक कहानी लिखने की कोशिश करूँगा।

आपको 'कंकाल' पसंद नहीं आया, इसका मुझे खेद है। मैं बड़ी उदार रुचि का आदमी हूँ और आलोचना-बुद्धि मुझ में कम है। 'कंकाल' में मुझको सच्चा आनन्द मिला और मैं पुस्तक से भी अधिक उस आदमी का प्रशंसक हूँ। वह बहुत खुले हुए और स्पष्टवादी आदमी हैं।

अपने कहानी अंक के लिए आप हिन्दी के जाने-माने लेखकों से चीजें माँगिये, जैसे जैनेन्द्र, सुदर्शन, कौशिक, प्रसाद, द्विज। इसके अलावा आप चाहें तो गुजराती,बंगला, उर्दू और मराठी कहानीकारों को भी अपनी-अपनी भाषा में एक कहानी लिखने के लिए आमंत्रित कर सकते हैं। फिर उसमें योरप और अमेरिका के आधुनिक-कहानीकारों के अनुवाद भी होने चाहिए। कहानी के मूल सिद्धान्तों पर एक लेख भी बेजा न होगा। शुभ कामनाओं के साथ,

आपका
धनपतराय

: तीन :

सरस्वती प्रेस, बनारस
१४ नवम्बर १९३२

प्रिय बनारसीदास जी, नमस्ते।

कृपा पत्र के लिए धन्यवाद। मैंने सदा आपको अपना सच्चा दोस्त

समझा है और आप मेरे साहित्यिक सलाहकारों में से एक हैं जिसकी आलोच
की मैं सबसे ज्यादा कदर करता हूँ क्योंकि वह सहानुभूतिपूर्ण होती है श्र
न्याय-बुद्धि पर आधारित होती है ! आलोचकों का मूल्यांकन जैसा कि श्र
खुद जानते हैं, लेखकों के लिए बहुत सन्तोष की चीज नही होती और वह स
मित्र ही हैं, जिनको कि वह सदा अपनी आँख के सामने रखता है। आपने
कुछ मेरे लिए किया है, उन सबका हवाला देने की आपने नाहक तकलीफ की
मैं उन चीजों को सारी जिन्दगी नही भूल सकता। जब कोई मौका आया
मैं आपकी तरफ से हमेशा लड़ा हूँ और मैं जिस रूप मे आपको देखता
उस रूप मे मैंने आपको देखने की कोशिश की है। मैं इस बात से इन्कार नह
करता कि साहित्यिकों में कुछ ऐसे लोग हैं, जो आपकी अवहेलना करते
और आपकी सच्ची लगन के लिए आपको अपना उचित प्राप्य नहीं देते
इतना ही नही, कुछ लोग उससे भी बहुत आगे चले जाते हैं। मगर किसी की
बुराई करने वाले लोग नही हैं। खुद मेरे चारो तरफ बुरा-भला कहने वाले लोग
जमा हैं जो मुझ पर चोट करने का एक भी मौका हाथ से न जाने देंगे।
दुर्भाग्य की बात है कि हमारे साहित्यिक-कर्मियों में विचारों की उदारता और
सौहार्द का भाव नही है। एक श्रेणी ऐसे लोगों की है जिन्हे किसी की कीर्ति
का ध्वस करने में आनन्द आता है, जिस कीर्ति को बनाने मे दूसरे आदमी को
बरसो लगे हैं। मगर उससे क्या ? हमे अपना अन्तःकरण स्वच्छ रखना चाहिए
और वही असली चीज है। ऐसा लगता है कि आप मजाक मे की गयी
छींटेकशी को जरा ज्यादा महत्व देते हैं। मामला संगीन तब होजाता है, जब
नीयत पर शक किया जाने लगता है। यह मैं कभी किसी हालत में बर्दाश्त
नहीं कर सकता। साफ दिल से की गयी छींटेकशी का आपको बुरा न मानना
चाहिए। अगर आप इतने नुकुकमिजाज हो जायेंगे तो आप अपनी बुराई करने
वालों की और प्रोत्साहन देंगे कि वह आपको चुटकी काटें। मुस्कराते हुए चेहरे
के साथ उनका सामना कीजिये।

एक समय ऐसा था जब किसी की एक अमित्रतापूर्ण चोटसे मैं रात की
रात जागता रह जाता था, आँखों की नींद उड़ जाती थी। मगर अब वह हालत

माधुरी—लखनऊ से प्रकाशित प्रसिद्ध मासिक-पत्रिका, अब यह बन्द हो गई है।

विशाल—कलकत्ता से प्रकाशित प्रसिद्ध मासिक-पत्रिका। अब यह बन्द हो गई है।

सरस्वती—इलाहाबाद से प्रकाशित सबसे प्राचीन हिन्दी मासिक पत्रिका।

कौशिक—विशम्भरनाथ कौशिक, प्रसिद्ध हिन्दी कहानीकार।

उग्र—पांडेय बेचेन शर्मा उग्र, प्रसिद्ध हिन्दी कहानीकार।

प्रसाद—जयशंकरप्रसाद, प्रसिद्ध हिन्दी कवि, नाटककार और कथाकार।

जागरण—प्रेमचंद द्वारा सम्पादित साप्ताहिक पत्र। यह एक डेढ़ साल प्रकाशित होकर बन्द हो गया था।

कंकाल—जयशंकर प्रसाद का प्रसिद्ध यथार्थवादी उपन्यास। प्रेमचन्द इस उपन्यास को बहुत पसन्द करते थे।

द्विज—जनार्दनशर्मा 'द्विज', तत्कालीन प्रसिद्ध कहानीकार। इन्होंने प्रेमचन्द पर एक आलोचनात्मक पुस्तक भी लिखी है।

कर्मभूमि—प्रेमचन्द का उपन्यास।

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. हिन्दी कथा-साहित्य के सम्बन्ध में प्रेमचन्द के विचारों पर प्रकाश डालिए।
२. प्रेमचन्द के प्रस्तुत पत्रों से उनके व्यक्तित्व और विचारधाराओं का जो चित्र आपके सामने बनता हो उसका वर्णन कीजिए।
३. 'कंकाल' के लेखक हैं—
   (क) प्रेमचन्द
   (ख) जयशंकर प्रसाद
   (ग) जैनेन्द्र कुमार
   (घ) सुदर्शन
   सही विकल्प के आगे ✓ का निशान लगाइये।

यात्रावृत्त

रूस में प्रवेश

(ले० राहुल सांकृत्यायन)

[यात्रा वर्णन मुख्यतः वर्णनात्मक रचना-विधा है, किन्तु अच्छे लेखक द्वारा लिखित यात्रा-वर्णन कहानी के समान रोचक और सरस होता है। यात्रा-वर्णन में विभिन्न घटनाओं, स्थानों और दृश्यों के वर्णनों के द्वारा लेखक को रोचकता और सरसता उत्पन्न करने के अवसर पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं और उत्तम लेखक उनका भली प्रकार उपयोग करता है। यात्रा-वर्णन पाठक के लिए मनोरंजक तो होता ही है, ज्ञान-वर्धक भी होता है।

प्रस्तुत रचना राहुल जी की तीसरी रूस यात्रा से सम्बन्धित है। वर्णन की दृष्टि से इसे दो भागों में बांटा जा सकता है। पहले अंश में उन दिक्कतों का वर्णन है जिनका सामना ईरान में वीसा प्राप्त करते समय उन्हें करना पड़ा। दूसरे अंश में द्वितीय-महायुद्ध के बाद रूस की आन्तरिक दशा का वर्णन है। महायुद्ध के परिणामस्वरूप रूस को कितनी भारी हानि हुई थी इसका राहुल जी ने चित्र सा खींच दिया है।]

तीसरी बार रूस जाने का निश्चय मैंने १९४३ में ही कर लिया था, किन्तु अंग्रेज सरकार ने पासपोर्ट देने में हीला-हवाला करके एक साल बिता दिया। उसके बाद फिर ईरान का वीसा मिलने में कई महीने लगे। अन्त में किसी तरह भारत छोड़कर ८ नवम्बर, १९४४ को मैं ईरान की राजधानी तेहरान पहुँचा। तेहरान पहुँचते-पहुँचते पास का पैसा करीब-करीब खतम हो चुका था। युद्ध के समय चीजों का दाम वैसे ही बहुत महँगा था और मैं ईरान की राजधानी में एक तरह खाली हाथ पहुँचा। लेकिन मानवता हर जगह आदमी को सहायता देने के लिए तैयार रहती

जाती है। मिर्जा महमूद अस्पहानी से यहाँ परिचय हो गया और फिर मुझे कोई तकलीफ नहीं रही। कुछ ही समय बाद भारत मे पीछे भी आ गये, लेकिन तो भी जो प्रकारण बंधुता मिर्जा महमूद ने दिखलायी और जिस तरह का सद्व्यवहार उनकी मौसेरी माँ खानम इस्मत नाजिमी ने किया, यह सदा स्मरणीय रहेगा। एक घुमक्कड़ अपने ऊपर किये गये उपकार का प्रतिदान कैसे कर सकता है? किन्तु कृतज्ञता की मधुर स्मृति तो जीवन भर रख सकता है। ८ नवम्बर, १९४४ से ३ जून, १९४५ ई० तक सात महीने मुझे जिस स्थिति मे रहकर काटने पड़े, उसे असह्य प्रतीक्षा ही कह सकते हैं। कभी-कभी भारत लौट जाने का मन करता था, तो मेरे भारतीय मित्र अपनी चिट्ठियों मे और ठहरने को कहते और वहाँ सोवियत दूतावास की चौखट अगोरते-अगोरते मन उकता गया था। यह भी पता नहीं लगता कि वीसा मिलेगा भी। लड़ाई के दिनों मे चिट्ठियों की यह हालत थी कि मेरे मित्र सरदार पृथ्वीसिंह की २२ फरवरी, १९४५ की चिट्ठी मुझे २४ मई को मिली अर्थात्—बम्बई से तेहरान ३ महीने के रास्ते पर था। हाँ, तार आसानी से मिल जाते थे। लेकिन तार मे अधिक बातें नहीं लिखी जा सकती थीं।

३ मई (१९४५) को हिटलर और गोयबल की आत्म-हत्या की भी खबर आ गयी। ८ मई को जर्मनी ने बिना शर्त हथियार डालने के कागज पर हस्ताक्षर भी कर दिया; किन्तु मैं अभी अनिश्चित अवस्था मे ही था। हाँ, इसके बाद दूतावास के लोगों के कहने के अनुसार आशा कुछ ज्यादा बलवती हुई। तेहरान मे भी रहना आसान नहीं था। खर्च के अलावा वहाँ सरकार से अनुमति लेते रहना पड़ता था। २६ मई को सोवियत कौंसल मे गया। पता लगा कि वीसा आ गया है। आज ही मेरे पासपोर्ट पर मोहर भी लग गयी। इन्तूरिस्त (सोवियत यात्रा एजेन्सी से पूछा तो उसने बताया कि मास्को तक हवाई जहाज का किराया ६६० तुमान (१ रु०=१ तुमान था) लगेगा और १६ किलोग्राम (१८ सेर) के बाद हर किलोग्राम पर ६ तुमान सामान

का संतोष। दफ्तर से मालूम हुआ कि वीसा तो तुरन्त नहीं बना था। हम तो यह समझते थे कि मैदान मार लिया, लेकिन २१ मई को ईरानी दफ्तर में निर्गम का वीसा लेने गये, तो कहा गया—मार्ग-विभाग का प्रमाण पत्र ला दें कि आपने यहाँ इतने दिनों रहकर जो कुछ कमाया, उसका टैक्स अदा कर दिया। मार्ग-विभाग में जाने पर कहा गया—दरख्वास्त दीजिए, जाँच की जायगी। मैं तो सोवियत यात्रा एजेन्सी (इन्तूरिस्त) से टिकट भी खरीद चुका था, २१ मई को यहाँ से जाने के लिए तैयार था। वैसे सब जगह नौकरशाही की मशीन बहुत धीमी गति से चलती है, लेकिन ईरानी मशीन तो अपना सानी नहीं रखती। उधर मेरे रहने के वीसे की मियाद भी बस तेरह दिन और रह गयी थी। यदि उसके बाद रहना पड़ा तो, फिर वीसा लेने की दिक्कत उठानी पड़ती। ब्रिटिश दूतावास में जाने पर रिजवी साहब ने कौन्सल की ओर से प्रमाणपत्र दे दिया कि मैंने यहाँ कोई कारबार नहीं किया। लेकिन अभी तो उसे फारसी तर्जुमा करके देना था। अगले दिन अनुवाद लेकर फिर ईरानी दफ्तर में गया। बहुत दौड़-धूप करनी पड़ी और अकेले ही। सात महीने तेहरान में रहने से भाषा की दिक्कत खतम हो गयी थी। तीन-तीन आफिसों में चक्कर लगाना पड़ा और जब १ बजे दिन को सही-सलामत कागज पर हस्ताक्षर हो गये, तो आफिस वालों ने कहा—"कौन्सल की मुहर काफी नहीं है। इस पर हस्ताक्षर भी करना चाहिए।" खैर उस दिन चार बजे तक सभी आफिसों से छुट्टी पा जाने पर बड़ा संतोष हुआ।

दे। उनके पास सामान भी भारी था, इसलिए मैं समझता हूँ, विमान ने उतना पूरा बोझ ले लिया था। गोलाकार छत बीच में मेरे सिर से एक हाथ ऊँची थी। मुझे तो विमान, मोटरबस की सादगी का प्रतीक मालूम हुआ। सीटें और पैरों के नीचे किसी कालीन भी न होते तो कोई बात नहीं। लेकिन जो विदेशी यात्री सफर कर रहे थे, वह इस बेसरोसामानी पर नाक-भौंह सिकोड़ रहे थे। चलने से पहले इन्तूरिस्त के आदमी ने हमारा पासपोर्ट देख लिया—कहीं कोई उसे भूल न आया हो। सवेरे पाँच बजकर दस मिनट पर विमान अपने तीनों पहियों पर खिसकते सनसनाहट के साथ धरती छोड़ने लगा। पहले तो वैसे ही मालूम हुआ, जैसे तरंगित समुद्र पर जहाज का चढ़ना-उतरना। हिमालय में जैसे नीचे दूर के खेत दीखते हैं, वैसे ही यहाँ भी नीचे कहीं-कहीं खेत थे। लेकिन हिमालय तो हरा-भरा है ईरानी पहाड़ नंगे हैं, भूमि भी नंगी है। मनुष्य ने कहीं-कहीं परिश्रम से नहर लाकर खेतों को हरा-भरा किया है। उन्हीं के पास घरौंदों जैसे छोटे-छोटे गाँव दिखायी पड़ते थे। शायद यह विमान अमेरिका का बना था, क्योंकि इसमें सारे संकेत अंग्रेजी में थे। लड़ाई के वक्त सामान और सैनिकों की ढुलाई करता रहा होगा।

विमान उड़ रहा था। अब वह काकेशस पर्वत-शृंखला की ओर अग्रसर हो रहा था, इसलिए ऊपर चढ़ने लगा, यद्यपि रुक-रुक कर ही। कहीं-कहीं नदियाँ मिलीं जो छोटी-छोटी नालियों-सी मालूम होती थीं। पर्वत तो तालाबों के मेंडे जैसे दिखायी देते थे। कानों में इंजन की घोर घनघनाहट सुनायी दे रही थी। और कोई दिक्कत नहीं थी। हमारी सह-यात्रिणी एक महिला के कानों से खून भी निकला, दूसरी के पेट में दर्द हुआ। पता लगा समुद्र रोग की भाँति आकाश-रोग नाम की भी कोई चीज है, किन्तु अधिकांश यात्री ऊँघ रहे थे। उसी तरह एक दूसरे के कंधे और शरीर की परवाह किये बिना, जैसे भारत की रेलों के तीसरे दरजे के यात्री। मौत का ख्याल क्यों आने लगा? विमान से मौत तो योगियों की मौत होती है—मौत के बारे में सोचने भर का भी तो समय नहीं मिलता।

हम बाकू के बाहर विमान-भूमि में पहुँचे । विमान-भूमि बिलकुल कच्ची थी । सोवियतवालों का कहना है कि जब हर जगह बिना श्रम और पैसे के खर्च किये काम चल सकता है, तब फिर, विशेषकर लड़ाई के समय, अड्डे पर लाखों मन सीमेंट डालने से क्या फायदा ? विमान जमीन पर उतरा । यहीं विमान बदलनेवाला था । हमारा सब सामान दूसरे वायुयान में गया । सामान की बहुत छान-बीन नहीं की गयी । फिर चार रूबल में एक प्याला चाय और दो टुकड़े रोटी के खाने को मिले ।

दस बज कर पाँच मिनट पर हम फिर जहाज में उड़े । बाकू के पसीनों और तेल-कूप की झाड़ियों को पीछे छोड़ा । पहले कितनी ही देर तक कास्पियन के पश्चिमी किनारे पर ही उड़ते रहे, फिर वोल्गा के दाहिने तट पर आ गये । यहाँ भी भूमि बहुत जगह गैर-आबाद थी । यह वही भूमि थी, जिसने जर्मन सेनाओं की विनाश-लीला को थोड़े ही समय पहले देखा था । अब कहीं-कहीं छोटे-छोटे पचायती खेत और उनके सुविशाल चक दिखायी पड़ने लगे । ढाई बजे हम स्तालिनग्राद पहुँचे ।

स्तालिनग्राद—स्तालिनग्राद सारे विश्व के लिए एक पुनीत ऐतिहासिक स्थान है । सारे विश्व पर जर्मन जाति के विजयी झंडे के साथ दासता के झंडे को भी गाड़ने के लिए आगे बढ़े, अपराजेय समझे जाने वाले जर्मन फासिस्टों को यहीं पर सबसे पहले करारी हार खानी पड़ी थी । ऐसी जबरदस्त हार कि उसके बाद फिर जो वे पीछे की ओर भागने लगे तो, कहीं भी सुस्ताने के लिए उन्हें मौका नहीं मिला । स्तालिनग्राद में देखने को क्या था ? उसकी तो ईंट से ईंट बज गयी थी । जर्मनों को पराजित हुए एक महीना भी नहीं बीता था । अभी वस्तुतः नगर के आबाद करने का काम नहीं हो रहा था । हाँ, नगर-निर्माताओं के आबाद करने की तैयारी हो चुकी थी । अधिकांश घर धराशायी थे । किसी-किसी के कंकाल कुछ-कुछ दिखायी पड़ते थे । दूर तक हजारों ध्वस्त मोटरों और विमानों का ढेर लगा हुआ था । प्रायः सभी जर्मन विमान थे । एक विमान की दुम कट कर अलग पड़ी हुई थी, जिसे

देखकर वह दृश्य सामने आ खड़ा हुआ, जब कि यह विमान अपने और
से साथियों के साथ स्तालिनग्राद पर मृत्यु-वर्षा कर रहा होगा। उसी
किसी साहसी सोवियत वैमानिक ने उनमें से एक की दुम तराश कर उसे
गिरने के लिए मजबूर किया। स्तालिनग्राद में भी हमारे विमान के उ
की भूमि कच्ची थी, घास-पात दूर घास की हरियाली तथा भूमि सरस
यह उसका वानस्पतिक वैभव बतला रहा था। यहाँ कहीं पर्वत नहीं
कहीं-कहीं एकाध कारखाने साहन और मुस्त से पड़े थे, उनकी चिमनियाँ
थीं। केवल एक बड़ी फैक्ट्री की चिमनी धुँआ दे रही थी, जो आंशिक
में चालू हो गई थी। पास में दूसरा बड़ा कारखाना निष्क्रिय पड़ा था।
बनाने वालों ने छोटे घरों में थोड़ी-सी मरम्मत करके आश्रय ग्रहण कि
था। हम यात्रियों ने भोजन किया, कुछ इधर-उधर घूम-फिर कर देख
आये। अभी सैलानियों के सैर करने का बाकायदा इन्तजाम कहाँ हो सक
था? लेकिन स्तालिनग्राद की अजेय भूमि पर पैर रख के यह कैसे हो सक
था कि मैं कल्पना-जगत् में न चला जाऊँ। सोवियत-भूमि एक ऐसी भूमि
जिसके बारे में दुनिया में दो ही पक्ष है—या तो उसके समर्थक और प्रशं
हों, या उसके कट्टर शत्रु। मध्य का रास्ता कोई अत्यन्त मूढ़ ही पकड़ सक
है। मैं सदा सोवियत का प्रशंसक रहा हूँ, बल्कि कह सकता हूँ कि जिस
घोर निद्रा के बाद अभी मुझे जरा ही जरा अपनी राजनीतिक आँखें खोल
का अवसर मिला, उसी समय मुझे विरोधियों के घन-घोर प्रचार के भीतर
रूसी क्रान्ति की खबरें सुनाई पड़ी, जिन्होंने मेरे दिल में नये प्रकाश को भरक
इस भूमि के प्रति इतना आकर्षण पैदा कर दिया, या कहिए, दिल को इत
छीन लिया कि मुझे इस जबरदस्ती का कभी अफसोस नहीं हुआ। मैं वर्षों उ
भूमि में रहा हूँ। यहाँ के लोगों और सरकार को बहुत नजदीक से देखा है
कड़वे-मीठे सभी तरह के अनुभव किये हैं। गुणों को जानता हूँ, साथ-साथ
उनके दोषों से भी अपरिचित नहीं हूँ। लेकिन मैंने उन दोषों का पाया कभ
भारी नहीं पाया। सोवियत भूमि से जो अनुराग या आशाएँ मानवता के
लिए मैंने बाँधी, उनमें किसी की बाधा नहीं हुई। इतिहास मानता है

और क्या कोई जानता कि मानवता की प्रगति में एक सबसे बड़ी बाधक शक्ति हिटलरी फासिज्म के रूप में पैदा हुई थी, उसको नष्ट करने का सबसे अधिक श्रेय सोवियत की जनता को है। उस समय जर्मन-पराजय के बाद स्तालिनग्राद में घूमते हुए मेरे मन में तरह-तरह की कल्पनाएँ आयी थीं। इस महान् विजय के बाद साम्यवाद के देश के बढ़ने की पूरी सम्भावना थी। आज हम महान् चीन का नव-निर्माण देख रहे हैं और उसकी प्रगति के वेग को देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है। लेकिन क्या स्तालिनग्राद ने अगर अपने कृतित्व को न दिखलाया होता तो ऐसा हो सकता था?

जैसे-जैसे विमान नीचे उतरा, वैसे-वैसे उसकी सुन्दरता और विशालता
गयी।

विमान के अड्डे पर उतरते वक्त आशा थी कि तेहरान में इन्तूरि
लिया गया होगा, इसीलिए शायद उनका आदमी लेने के लिए आया
किन्तु वहाँ किसी का कोई पता नहीं था। जाना भी किसका था,
इतनी जल्दी में जो तय किया था, वह शायद भूला जा चुका
तेहरान के विमान का उपयोग इसी मौसम के लिए कर सकते थे, किन्तु
दुविधा में पड़े थे। किसी तरह सामान विश्रामगृह में पहुँचाया। इन्तूरि
पास फोन करना चाहा, तो किसी को उसका पता नहीं था। वस्तुतः यु
कारण सैलानियों के लिए यात्रा की व्यवस्था करने का काम रह नहीं गया
इसलिए विदेशी दो यात्रियों में इन्तूरिस्त के जिस गुप्त प्रबन्ध को मैंने
था, उसको इस वक्त नहीं पाया। बहुत पूछताछ करने पर वहाँ किसी अ
की प्राइवेट कार मिल गयी जिसके ड्राइवर ने दो सौ रियाल (प्राय सव
रुपये) में होटल तक पहुँचा देने का जिम्मा लिया। दो-एक जगह पूछ
करने पर अन्त में इन्तूरिस्त के होटल में पहुँच गया। कमरा खाली नहीं
अंग्रेजी दूतावास में चले जाइये—कहा गया। उस समय भारतीय दूता
नहीं था, अंग्रेजी दूतावास में किस परिचय के बल पर जा सकता था।
जरा ठहरने पर एक कमरा मिल गया। चीजें बहुत मँहगी थीं, किन्तु वही
राशन में नहीं थी। मैंने सोचा था, राजधानी के नर-नारियों पर युद्ध का ब
बुरा प्रभाव पड़ा होगा। लेकिन सड़कों पर भीड़ में मैंने किसी के शरीर
फटे कपड़े नहीं देखे और न चेहरों पर चिन्ता की छाप ही थी। अपने बारे
सोचने लगा—सौ पौंड का चेक लेकर मैं आया हूँ, जिसमें आठ पौंड तो मो
के ही निकल गये। चीजें इतनी मँहगी थीं कि अगर अपने पौंडों के भरो
रहना होता तो उनका क्या बनता? रात को रहने के लिए जो कमरा मिल
वह बहुत साफ-सुथरा था। उसमें तीन बत्तियाँ थीं, शीशेदार आलमारी,
आरामदेह, तीन कुर्सियाँ, दो मेज, नीचे अच्छी कालीन बिछी हुई थी। हाँ
एक लिहाफ कुछ पुराना जरूर था। दीवार पर एक सुन्दर तस्वीर भी टँग

रिपोर्ताज

रांची

['रिपोर्ताज' साहित्य की नवीनतम गद्य-विधा है। इस गद्य-विधा का विकास द्वितीय महायुद्ध के दौरान सोवियत लेखकों ने विशेष रूप से किया। 'रिपोर्ताज' अपने सामान्य अर्थ में अखबार के लिए 'रिपोर्टिंग' मात्र है। सामान्य रिपोर्टिंग में, जैसा कि हम प्रतिदिन अखबार में पढ़ते हैं, तथ्य का साधारण वर्णन मात्र होता है। ऐसा वर्णन साहित्य की दृष्टि से महत्वहीन है। रिपोर्ताज का लेखक केवल तथ्यों का वर्णन नहीं करता है, उन्हें संयोजित करके आकर्षक बनाता है और फिर रोचक तथा प्रभावशाली शैली में उन्हें प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत रचना में लेखक ने रांची स्थित 'कारखाने बनाने वाले कारखाने' का परिचय रोचक और प्रभावशाली शैली में प्रस्तुत किया है। लेखक ने रांची कारखाने के निर्माण की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए भारत की उद्योग-व्यवस्था में रांची के भारी उद्योग-कारखाने के महत्व पर भी अच्छी तरह प्रकाश डाला है। लेखक ने उसे 'कारखानों का कारखाना' ठीक ही कहा है। रांची के भारी उद्योग कारखाने की विशेषता है उन मशीनों का निर्माण जो अन्य कारखाने बनाती हैं।]

रांची आइये तो भारी इंजीनियरी कारपोरेशन अवश्य देखिये।

यह पर्यटन सम्बन्धी किसी पुस्तिका से उद्धृत कोई इश्तेहार नहीं है। इन शब्दों में गहरी देशभक्ति भरी हुई है। इसलिए कि आज रांची एक महत्वपूर्ण औद्योगिक विकास-प्रतिष्ठान की राष्ट्रीय राजधानी है। भारी इंजीनियरी कारपोरेशन (एच. ई. सी.) के कई कारखाने रांची में स्थित हैं। इसीलिए आधुनिक भारत की खोज पर निकलने वाले प्रत्येक भारतीय के लिए यह एक दर्शनीय स्थल है।

करीब दो सदियों तक विदेशी शासन काल में हमारा औद्योगिक विकास अवरुद्ध रहा । उस जमाने में हमारे देशभक्त सपूत यह सपने देखा करते थे कि बेड़ी को काट लेने के बाद वे अपने देश का औद्योगीकरण बड़े पैमाने पर करेंगे । स्वतन्त्र-भारत की उनकी तसवीर में जगह जगह शक्तिशाली औद्योगिक प्रतिष्ठानों का स्थान था । आज उस सपने का एक अंश साकार रूप धारण कर चुका है । देश की यात्रा करने वाला आधुनिक तीर्थयात्री भिलाई इस्पात कारखाना, नेइवेली ताप बिजलीघर, एच. ई. सी. रांची, अंकलेश्वर तेल क्षेत्र, बरौनी तेल रिफाइनरी, हरिद्वार भारी बिजली उपकरण कारखाना जैसे सुन्दर "मन्दिरों" के दर्शन करता है । दर्जनों नये, छोटे-बड़े प्रतिष्ठानों में से कुछ के ये नाम हैं ।

नये विशाल कारखानों में, एच. ई. सी. रांची का एक विशिष्ट स्थान है । यह एक विशाल कम्प्लेक्स है जो पुराने शहर के निकट बसे हुए एक नये शहर भर में फैला हुआ है । एक साफ-सुथरी सड़क से गुजरते हुए हमें रास्ते में एक स्थानीय आदिवासी किसान की एक ऊँची सी मूर्ति मिलती है । यह मूर्ति काले पत्थर से बनायी गयी है । उसकी खुली छाती में चुनौती का भाव टपकता है । उसके सिर पर पगड़ी है, चेहरे पर कठोरता और दृढ़ संकल्प के भाव हैं । यह बिरसा भगवान की मूर्ति है जिन्होंने १९ वीं सदी में विदेशी शासन के खिलाफ किसान विद्रोह का नेतृत्व किया था । नये भारत का स्वप्न पूरा करने के लिए बिरसा और [illegible] यों की उनकी सेना को लड़ना पड़ा था ।
आज [illegible] "ताजमहल" को देखने के लिए आने

[illegible] गुप्ता के मन में सबसे
[illegible] र सिर्फ भारत भर
[illegible] मुगलों द्वारा भी
[illegible] राज के अन्तर्गत [illegible]
प्राचीन [illegible] का और भारी मन [illegible]

जाये, प्रतिवर्ष कम से कम ४५,००० टन से कम उत्पादन नहीं किया
वे इसका स्वागत करेंगे यदि ८०,००० टन उत्पादन वाली यूनिट तैय
जाये जिसकी उत्पादन क्षमता १,६५,००० तक बढ़ायी जा सके ।

भारत सरकार ने भारी इंजीनियरी उद्योग की स्थापना से सम्ब
एक उपयुक्त योजना तैयार करने के प्रश्न पर सलाह देने के लिए एक कमेटी
की । इस कमेटी के अध्यक्ष थे टाटा उद्योग लिमिटेड के डायरेक्टर सर जह
गांधी । १९५७ के उत्तरार्द्ध में इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर
विभिन्न पहलुओं पर विचार करने के बाद अन्त में, भारत सरकार ने ८०,
टन की क्षमता वाली यूनिट की स्थापना का फैसला किया ।"

इस प्रकार इस विराट कारखाने का जन्म हुआ । यहाँ १९६
उत्पादन शुरू हुआ ।

एच. ई. सी. भिलाई और दुर्गापुर इस्पात कारखाने के विस्त
अपना योगदान कर चुका है । आजकल यह निर्मित हो रहे बोकारो इ
कारखाने के लिए उपकरण तैयार करने में संलग्न है जो भिलाई का
किन्तु वास्तव में वृहत्तर भाई है । एच. ई. सी. के निर्माण के पहले दे
बनने वाले इस्पात कारखानों के अधिकांश उपकरण बाहर से मँगाये जाते
लेकिन भारत के सबसे बड़े इस्पात कारखाने, बोकारो को करीब ३५ प्रति
उपकरण एच ई सी. से मिल रहे हैं । यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क
इससे यह पता चलता है कि एच ई सी. जैसी परियोजना की, आत्मनिर्भ
की दिशा में क्या क्षमता है ।

किन्तु यह बात यहीं खत्म नहीं होती । मैंने यह जानना चाहा कि
कारखाने ने देश के बुनियादी औद्योगिक विकास में और क्या महत्त्वपूर्ण य
दान दिया है । कारखाने में उत्पादित सामान की जो सूची मुझे प्राप्त
वह अत्यधिक उत्साहवर्द्धक है । इस कारखाने ने दुर्गापुर इस्पात मिल
कच्चा लोहा, कास्टिंग मशीन, भिलाई स्थित छठी धमन भट्टी काम्प्लेक्स
लिए धमन भट्टी शेल और उपकरण, हरिद्वार भारी बिजली उपकरण कारख

के लिये ई. श्रो. टी. क्रेनें तथा राष्ट्रीय कोयला विकास कारपोरेशन के लिए एक्सकेवेटर दिये हैं।

एच. एम. बी. पी. ने सूक्ष्म सामान भी तैयार किये हैं, जैसे सीमेन्ट कारखानों के लिए ५-६ मीटर लम्बे गर्म गियर और हिन्दुस्तान केबुल लिमिटेड के लिए केबुल ढकने की सम्पूर्ण मशीन। यह कारखाना भिलाई के लिए सातवीं कोक चूल्हा बैटरी तैयार कर रहा है जो धमन भट्टी के अलावा भारत में तैयार होने वाली पहली चीज है। इसके अतिरिक्त एच. एम. बी. पी. में स्लैग लैडल कारें, चार्ज डिस्ट्रीब्यूटर और कोक क्वेंचिंग कारें भी तैयार हुई हैं।

हाल में एच. ई. सी. ने विविध कार्य शुरू किये हैं और महत्त्वपूर्ण सामान जैसे लगातार ढालने वाली मशीन, रोल टर्निंग लेथ और कुआँ खोदने वाले रिग तैयार किये हैं। कुआँ खोदने वाले रिग भारतीय डिजाइन इंजीनियरों की गौरवपूर्ण उपलब्धि है। इसके बारे में मुझे सबसे पहले श्रो. पी. सोकोलोव्स्की ने बताया जो डिजाइन ब्यूरो से संलग्न मुख्य सोवियत डिजाइन विशेषज्ञ हैं। यह ब्यूरो एक बहुत बड़ा विभाग है, जो पूरे भवन में स्थित है और महत्त्वपूर्ण काम करता है। वस्तुतः मुख्य भारतीय डिजाइन इंजीनियर श्री एम. कुट्टू ने मुझे बताया—"उत्पादन कार्य डिजाइन-कार्य से ही शुरू होता है।" यहाँ प्रतिभाशाली भारतीय इंजीनियरों का एक दल कार्यरत है। उनकी सहायता सर्वोत्तम सोवियत विशेषज्ञों का एक छोटा सा दल कर रहा है। डिजाइन ब्यूरो मानो किसी विश्वविद्यालय का एक ऐसा विभाग है जहाँ उच्चकोटि के राष्ट्रीय टेक्नालजिव

भीतर गहरे घुस कर बर्बाद हो जाता है, फिर से बाहर निकाल लेगा। योजना अफसर श्री भूपेन्द्र नाथ ने कहा—"इस रिंग के लिए हमें प्राय: सभी राज्यों से आर्डर प्राप्त हो चुके हैं।" सूखे के खिलाफ लड़ने के लिए यह भारतीय जनता के हाथों में एक प्रभावशाली हथियार सिद्ध होगा।

उपरोक्त उत्पादन एक ऐसी मंजिल के द्योतक हैं जो एच. ई. सी. की निश्चित क्षमता से अभी बहुत पीछे है। लेकिन इस विशाल कारखाने के लिए आज यह समस्या नहीं है कि निश्चित क्षमता पर पहुँचा जाये। असल समस्या यह है कि पहले तो आज जो क्षमता है, उसका उचित उपयोग हो। दूसरे, यह कि उसे अपना भोजन निश्चित रूप से और लगातार मिलता रहे ताकि इसे किसी भी मंजिल में भूखा या अधपेट नहीं रहना पड़े।

रांची के कार्य का एक महत्वपूर्ण पहलू है, तकनीकी ज्ञान का, जो आधुनिक संसार में सबसे मूल्यवान वस्तु है, प्रसार करना। मुझे यह जानने की बड़ी उत्सुकता थी कि विकसित सोवियत-संघ विकासमान भारत को यह ज्ञान ठीक किस प्रकार प्रदान कर रहा है। इस विषय पर ए. एस. वेन्जेगा और सोकोलोव्स्की ने मुझे जो कुछ बताया उसका समर्थन किया श्री एस. कुण्डू ने। वह प्रक्रिया यों कार्य करती है।

भारत-सोवियत सहयोग परियोजनाएं दोनों देशों के बीच असली और पूर्ण सहयोग के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। जब किसी नयी परियोजना के लिए सहयोग के समझौते पर हस्ताक्षर होते हैं तो सोवियत-संघ एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। परियोजना सम्बन्धी रिपोर्ट तैयार करने में भारतीय विशेषज्ञों का सहयोग लिया जाता है और इस प्रकार उस प्रक्रिया का प्रारम्भ होता है।

फिर भारतीय विशेषज्ञ परियोजना रिपोर्ट को पढ़ते और अच्छी तरह समझते हैं। यह नये तकनीकी ज्ञान की दूसरी खुराक होती है। इसके बाद तकनीकी दस्तावेज (टी. डी.) तैयार होती हैं। इन्हें सोवियत डिजाइन ब्यूरो तैयार करते हैं और वे कारखाना-निर्माण कार्य का आधार होती हैं। वे मानो हमारी जनता के हाथों में सोने की चाबी का काम करती हैं। टी. डी. का

अध्ययन करने वाले और उसमे स्थानीय परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन करने वाले—"भारतीयकरण" करने वाले—भारतीय इंजीनियर मूल्यवान-तकनीकी ज्ञान मे पारंगति प्राप्त करते हैं और इस सिलसिले में बहुमूल्य सृजनात्मक अनुभव प्राप्त करते हैं। भारत-सोवियत समझौते मे यह व्यवस्था होती है कि किसी विशेष परियोजना को आवश्यक तकनीकी दस्तावेजे मिलेगी। ध्यान देने योग्य यह है कि ये तुलनात्मक दृष्टि से सस्ती दर पर मिलती हैं।

तकनीकी ज्ञान प्रदान करने के क्षेत्र मे एक सहायक उपादान है सोवियत विशेषज्ञों की कार्य प्रणाली और उनका दृष्टिकोण, जो दूसरों से बिल्कुल अलग है। श्री कुण्डू के शब्दों मे—"सोवियत विशेषज्ञ बहुत ही उपयोगी होते हैं। मैंने जर्मनों और अंग्रेजो के साथ भी काम किया है। लेकिन सोवियत विशेषज्ञों का कोई जवाब नहीं।" किसी काम के सिलसिले मे सोवियत और भारतीय विशेषज्ञो के बीच घनिष्ठतम सम्पर्क कायम रहता है। सभी प्रश्नो का, उदाहरण के लिए उत्पादन की पुनर्व्यवस्था करने से सम्बन्धित प्रश्नों का परस्पर विचार-विनिमय से समाधान निकाला जाता है। बहस के सिलसिले मे सोवियत विशेषज्ञ अपना अनुभव प्रस्तुत करते हैं। यह तय करना भारतीयो का काम है कि यह उनके लिए उपयुक्त है या नही। सोकोलोव्स्की ने कहा—"सोवियत विशेषज्ञ यह समझते हैं कि उनका मुख्य काम न सिर्फ संशोधन-कार्य मे सहायता करना है, बल्कि भारतीय इंजीनियरो द्वारा प्रस्तुत किसी नये विचार का समर्थन करना और उसे सफल बनाना भी है।"

भारतीय इंजीनियरों को प्रशिक्षण के लिए सोवियत कारखानो में भेजने से भी तकनीकी ज्ञान-प्राप्ति में सहायता मिली है। श्री कुण्डू के अनुसार—"टेक्नालाजी के क्षेत्र मे उत्पादन और देखभाल सम्बन्धी पक्ष मे हमारे देश में काफी प्रतिभाएँ मौजूद हैं। किन्तु, डिजाइन-पक्ष मे जो सीढी का पहला डंडा है, हम अभी तक अच्छी तरह विकसित नही हैं। इसीलिए हम विदेशी सहयोग के इतने इच्छुक हैं।"

सोवियत संघ ने काफी मात्रा में यह ज्ञान मुहैया कराया है। इसे हम

रांची में देखते हैं, जैसा कि देश की किसी भी अन्य सोवियत सहायता प्राप्त परियोजना में देखा जा सकता है।

अलादीन की तरह भारतीय औद्योगीकरण के पास चिराग का एक जिन्न है जो उसका हुक्म बजा लाने को तैयार है, वह है रांची स्थित "कारखाने पैदा करने वाले कारखाने के रूप में।" आवश्यक यह है कि वह इसे चुस्त-दुरुस्त रखे, उसके लिए हमेशा काम ढूँढ़े। यह एक ऐसी वस्तु है जिस पर गर्व किया जा सकता है और देश के अर्थतंत्र के लिए जिसका उचित उपयोग किया जा सकता है।

(संकलित)

अभ्यास के लिए प्रश्न :

१. लेखक ने रांची के कारखाने को 'कारखाने बनाने वाला कारखाना' क्यों कहा है? हमारी उद्योग-व्यवस्था में रांची-कारखाने के महत्व पर प्रकाश डालिये।

२. रांची के भारी मशीन-निर्माण कारखाना बनाने में भारत सरकार को जो सोवियत सहायता मिली उसका वर्णन कीजिये।

३. रांची का भारी मशीन-निर्माण कारखाना भारत के किस राज्य में स्थित है।

✓(क) बिहार में

(ख) बंगाल में

(ग) उड़ीसा में

सही विकल्प के आगे ✓ का निशान लगाइये।

आनन्द की खोज

(ले० रायकृष्णदास)

[गद्य-काव्य और गद्य के बीच की रचना-विधा है गद्य-काव्य। गद्य-काव्य में वाक्य-रचना यद्यपि गद्य जैसी होती है, किन्तु वाक्यों में काव्य जैसा प्रवाह, माधुर्य और कोमलता होती है। गद्य-काव्य का शरीर गद्य का होता है, आत्मा काव्य की होती है। आधुनिक युग में जब कविता के लिए छन्द और तुक अनावश्यक मान लिए गये हैं, गद्य-काव्य गद्य की अपेक्षा काव्य-गीत के अधिक निकट हो गया है। गद्य-काव्य एक छोटी रचना है। इस दृष्टि से उसकी तुलना गीत से हो सकती है।

प्रस्तुत गद्य-काव्य 'आनन्द की खोज' का विषय मनुष्य द्वारा आध्यात्मिक आनन्द की खोज है। लेखक ने बतलाया है कि यद्यपि मनुष्य जीवन भर आनन्द की खोज में सारे संसार में भटकता है किन्तु सच्चा आनन्द उसे अपने अन्दर ही मिल सकता है। मनुष्य के अन्दर ही सच्चिदानन्द का निवास है और उसका ज्ञान ही सच्चे आनन्द की प्राप्ति है। रायकृष्ण दास ने इस रचना में अपनी अनुभूति बहुत मधुरता और स्पष्टता के साथ प्रकट की है।]

आनन्द की खोज में मैं कहाँ कहाँ न फिरा? सब जगह से मुझे उसी भाँति कलपते हुए निराश लौटना पड़ा जैसे चन्द्र की ओर से चकोर लड़खड़ाता हुआ फिरता है।

मेरे सिर पर कोई हाथ रखने वाला न था और मैं रह-रह कर यही बिलखता कि जगन्नाथ के रहते मैं अनाथ कैसे रहता हूँ, क्या मैं जगत के बाहर हूँ।

ोचकर अचरज होता कि आनन्द-कन्द-मूल की इस विश्व-
न्द का अणु-मात्र भी न मिले ! हा ! आनन्द के बदले
को परिपोषित कर रहा था।

झसे न रहा गया। मैं चिल्ला उठा – आनन्द, आनन्द कहाँ
तेरी खोज में मैंने व्यर्थ जीवन गँवाया। बाह्य प्रकृति ने
या, किन्तु मेरी आन्तरिक प्रकृति स्तब्ध थी। अतएव
र्थ हुआ। पर इसी समय ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण सजीव
उठा—क्या कभी अपने आप में भी देखा था ? मैं

जब मैंने—उसी विश्व के एक अंश—अपने आप तक
मैंने यह कैसे कहा कि समस्त सृष्टि छान डाली ? जो
पको न दे सका वह भला दूसरे मुझे क्यों देने लगे ?

तो जो वस्तु मैं अपने आपको न दे सका था वह मुझे
लती और जो मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से न मिली थी वह

प्रश्न :

षता बतलाते हुए 'आनन्द की खोज' रचना पर अपने विचार

आनन्द की प्राप्ति किस स्थान पर हुई—
चरणों में
ौन्दर्य में
में
में
के आगे ✓ का निशान लगाइये।

निरानंद = ...
अभाव, कारगुज़ारी — ...
निर्विवाद = विवाद ...
घबराते हुए, बेचारे ...
बौछार = विस्तार से ...
परद नहीं देकर = ...

पुनाह = ...
= छार, बूः = व्यंग,
बनाइ = ज्यादा बढ़

माक्रोल = औ
= शौनता है दाँत
महरे बुने = हिरे,

शब्द-कोष

१. निरापद

निरापद = जिसमें किसी विपत्ति का डर न हो, निरादर = आदर का अभाव, कारगुजारी = कार्य, कल्पनातीत = जिसकी कल्पना भी न की जा सके, निर्विवाद = विवाद रहित, जामिन = जमानत देने वाला, सकपकाते हुए = घबराते हुए, बेआसरे = आश्रयहीन, किफायत = बचत, बदहवासी = घबराहट, ब्योरेवार = विस्तार से, पौंड = पाउण्ड (अंग्रेजी शब्द का बिगड़ा रूप), गरदनियाँ देकर = गर्दन में पकड़ कर, पोंगा = मूर्ख।

४. बहिन सुभद्रा

शैशव कालीन = बचपन के समय का, लक्षित = दिखाई देने वाला पाट = चौड़ाई, रागात्मक = भावनात्मक, वार्धक्य = बुढ़ापा, उपरान्त = बाद में अनधिकार = बिना अधिकार के, अनायास = बिना प्रयत्न के, अन्वेषिका = खोजने वाली, अभियुक्त = अपराधित, वक्र-कुंचित = टेढ़ी मेढ़ी, कटु-तिक्त = कड़वा और तीखा, उत्फुल्ल = प्रसन्न, कृश देहयष्टि = दुर्बल शरीर, भावस्नात = भावों से पूर्ण, तृप्ति = सन्तोष, संक्रामक = छुतैली, स्वभाव जात = स्वभाव से उत्पन्न, सन्नद्ध = तैयार, सम्पन्न = धनवान, उदात्त = गम्भीर, भीमाकृति = विशाल आकृति, समवयस्क = समान, वत्सला = प्रेम करने वाली, उत्स = स्रोत, तारतम्य = क्रम, अन्तरव्यापिनी = हृदय के भीतर रहने वाली, अनुगामिनी = अनुसरण करने वाली, क्षुब्ध = क्रोधित, औचित्य = उचित का भाव, सहिष्णु = सहनशील, पुष्पाभरणा = फूल ही जिसके आभूषण हैं, आलोक वसना = प्रकाश ही जिसका वस्त्र है, पार्थिव = लौकिक।

५. राखी

प्रतिदान = बदला, अजस्र-शक्ति = कभी समाप्त नहीं होने वाली शक्ति, वैमनस्य = शत्रुता, विवेक = ज्ञान, नाकामयाब = असफल, फख्र = अभिमान, कुमक = सहायता, लफ्ज = शब्द, खौफ = डर, पैगाम = सन्देश, कयामत = प्रलय, सौगात = उपहार, खाक = धूल, जर्रा = कण, बहिश्त = स्वर्ग, तअस्सुब = साम्प्रदायिक, इल्तजा = प्रार्थना, तवारीख = इतिहास, पाक = पवित्र, परवरदिगार = भगवान्, औलाद = सन्तान, हिदायत = निर्देश, गुमराह = भटका हुआ, कूच = यात्रा, तालीम = शिक्षा, अदब = शिष्टता, लहमा = क्षण, फराख-दिली = उदारता, नियामत = वैभव, साया = परछाईं, अजाब = पीड़ा, यातना, तंगदिली = संकीर्णता, जिहाद = धार्मिक युद्ध, मर्तबा = बार, दरिया = समुद्र।

६. सच्चा जीवन

क्षितिज = जहां पृथ्वी-आकाश मिलते दिखाई दें, श्रेणी = चोटी, वर्ग, बिखरे = फैला हुआ, कगार = किनारा, वैतरणी = नरक में बहने वाली नदी, कृमि = कीटाणु, उपार्जन = कमाना, दृश्य जगत् = भौतिक संसार, ऐहिक = लौकिक, येन केन प्रकारेण = किसी भी तरह, पुश्त दर पुश्त = पीढ़ी दर पीढ़ी, प्रवृत्त = लगा हुआ, संकल्प-विकल्प = सोच-विचार, निष्काम = इच्छा रहित, पृथक् = अलग, अथक = बिना थके हुए, भास्कर = सूर्य, आच्छादित = ढंका हुआ ।

७. वापसी

नेट = भारत में बने हुए एक हवाई जहाज का नाम, टोह = खोज, खुदा हाफिज = भगवान रक्षा करे, अहम = महत्वपूर्ण, बखूबी = अच्छी तरह, सलामत = सुरक्षित, अमन = शांति, जंग = युद्ध, गुनाह = पाप, आकबत = परलोक, बगावत = विद्रोह, माहौल = वातावरण, खिदमत = सेवा, नाज = अभिमान, बेपनाह = असुरक्षित, सियासत = राजनीति, भाव-विह्वल = भाव-व्याकुल ।

८. रामराज्य

पार्थिवता = भौतिकता, शिष्टमंडल = प्रतिनिधि मंडल, परिचालक = सेवक, विश्रामागार = विश्राम का स्थान, बनैले = जंगली, मर्म = रहस्य, आवास-कक्ष = रहने का कमरा, पथ-प्रदर्शक = रास्ता दिखलाने वाला, कार-बार = कार्य, शिल्पी = कारीगर, खटैत-क्रिया = थकाने वाला काम, उपभोक्ता = उपयोग करने वाला, कर्मविधि = काम करने का तरीका, त्रुटि = गलती, एकाध = कोई, अनहद = स्वर्गीय, अलौकिक, सुथरी = साफ, प्रचुर = बहुत,

स्वावलम्बी = आत्मनिर्भर, पुराण-पंथिता = पुराने विचारों को अपनाये रहने की प्रवृत्ति, अन्त्यज = अछूत, प्रतिकूल = विरुद्ध, सब्ती = सनकी, स्वत: प्रस्फुटित = अपने आप खिला हुआ।

९. चिंची का वैज्ञानिक रूप

ज्योतिविद = नक्षत्रों का जानकार, समाधान = हल, एप्रेन्टिस = शिक्षार्थी, स्वाध्याय = स्वयं किया हुआ अध्ययन, दक्षता = चतुरता, प्रेरित किया = उत्साहित किया, अनन्तर = बाद मे, तरावट = शीतलता, टेढी खीर = कठिन कार्य, कारगर = सफल, ख्वाब = स्वप्न, दृष्टिगोचर = दिखलाई देना, यथावत् = जैसे को तैसा।

१०. बचपन की यादें

किंचित् = थोड़ा, निराकरण = दूर करना, पितृ घातक = पिता को मारने वाला, कौतुक = खेल, सहजविश्वासी = जल्दी विश्वास करने वाला, नाहक = व्यर्थ, आर्द्र = तरल, परिपाटी = परम्परा, कटुबोध = कड़वा ज्ञान, आशीष = आशीर्वाद, पंगत = पंक्ति, नागवार = बुरा, यथोचित = ठीक-ठीक, शृंखला = जंजीर, दूरगामी = दूर तक प्रवाह डालने वाला, आधि = मानसिक चिन्ता, व्याधि = शारीरिक रोग, आसेब = प्रेतबाधा, फलाहार = फल का भोजन।

११. निरालाजी के संस्मरण

भाव-राशि = विषय-वस्तु, अस्फुट = न बनी हुई, आभास = इशारा, संकेत, व्यंजना = प्रभाव, कठाग्र = जबानी याद, प्रेमालाप = प्रेम-पूर्ण बातचीत, उर्वर = उपजाऊ, सहेजकर = सँभालकर, आतुरता = व्याकुलता, मुदुता =

कोमलता, तरकीब=तरीका, हक्का-बक्का होकर=आश्चर्य से घबराकर, चमरौधा=चमड़े का जूता, मोचर=पयगार, दिक्कत=कठिनाई, क्षुधा=भूख, दाद देना=प्रशंसा करना, विषाद=दुख, जर्जर=निर्बल,

१२. ऐतिहासिक उपवास का आरम्भ

इकरार करना=स्वीकार करना, हृदय-विदारक=बहुत दुख देने वाला, अन्तर्नाद=भीतरी आवाज, अशन=भोजन, उत्कट=तीव्र, तपश्चर्या=तपस्या, योग्यायोग्य=योग्य और अयोग्य, दुराग्रह=जिद्द, रोष=क्रोध, अतिशय व्यथा=बहुत अधिक कष्ट, परोक्ष=अप्रत्यक्ष, शब्दशः=शब्द-शब्द, पूरी तरह से।

१३. प्रेमचन्द के पत्र

दरकार=जरूरत, गल्प=कहानी, हविश=इच्छा, लालसा=इच्छा, बे जरूरत=बिना जरूरत, मयस्सर होता रहे=मिलता रहे, कद्र=इज्जत, बेजा=अनुचित, सौहार्द=प्रेम, तुनुकमिजाज=शीघ्र नाराज होने वाला, गलत फहमियाँ=गलत धारणाएँ, बर्दाश्त=सहन।

१४. रूस में प्रवेश

हीला-हवाला=टालना, वीसा=किसी देश में प्रवेश करने का आज्ञा पत्र, अगोरते=प्रतीक्षा करते, सानी=दूसरा, मुकाबले का, तर्जुमा=अनुवाद, मिनसार=सूर्य निकलने से पहले का समय, ब्राह्म बेला, तरंगित-लहरों से भरा हुआ, घरौंदा=छोटा झोंपड़ा, फुटकियाँ=छोटे टुकड़े, हिमाच्छादित=बर्फ से ढँका हुआ, पुनीत=पवित्र, अपराजेय=जिसे कोई पराजित नहीं कर सके, ईंट से ईंट बजाना=पूरी तरह नष्ट करना, धराशायी=नष्ट, ध्वस्त=टूटा हुआ, तराशना=काटना, प्रासाद=महल, डबरा=गड्ढा।